इग्नू
जन-जन का विश्वविद्यालय

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ

BHIC-109
भारत का इतिहास -V
(*c*. 1550-1605)

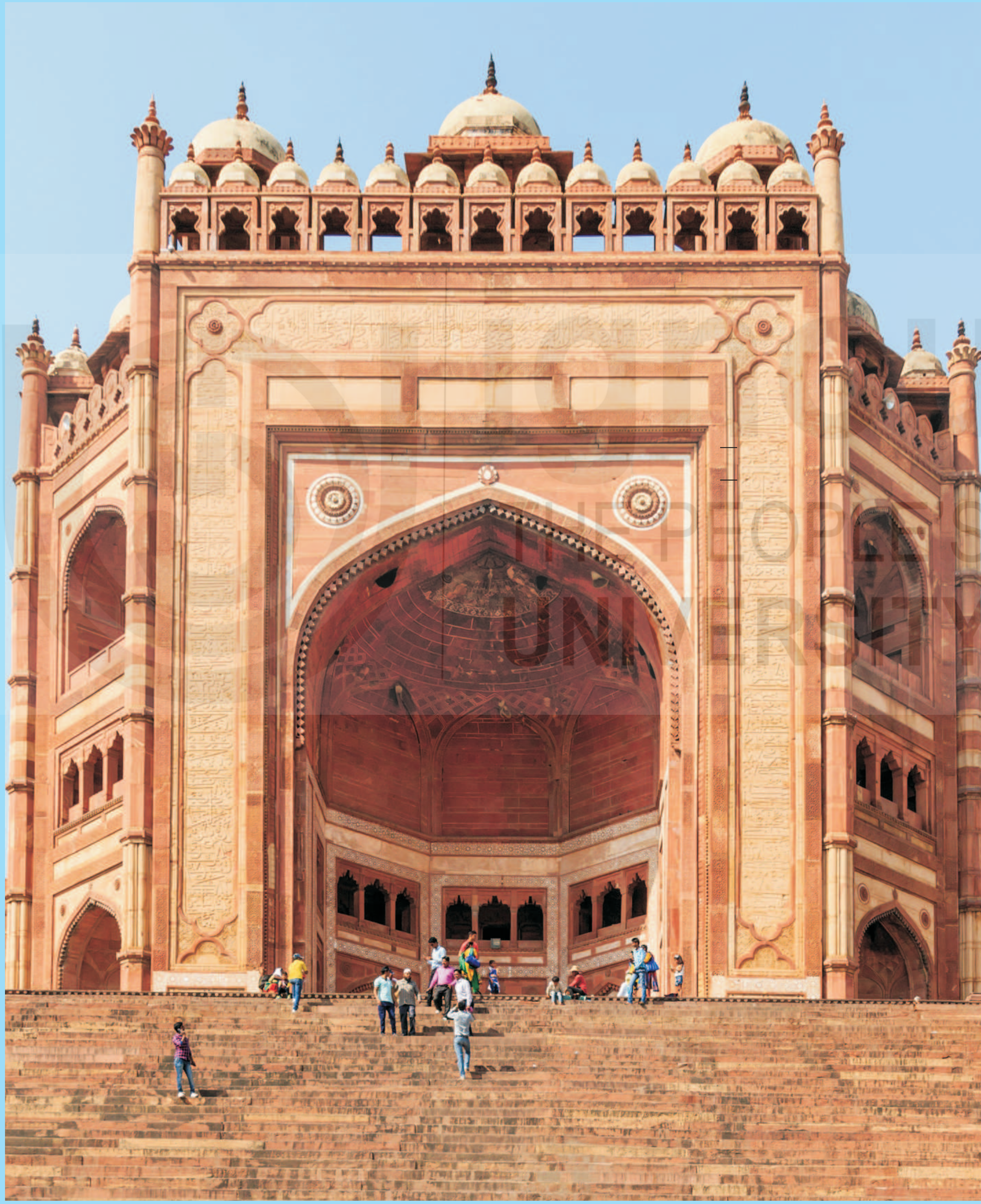

''शिक्षा मानव को बन्धनों से मुक्त करती है और आज के युग में तो यह लोकतंत्र की भावना का आधार भी है। जन्म तथा अन्य कारणों से उत्पन्न जाति एवं वर्तमान विषमताओं को दूर करते हुए मनुष्य को इन सबसे ऊपर उठाती है।''

– इन्दिरा गांधी

"Education is a liberating force, and in our age it is also a democratising force, cutting across the barriers of caste and class, smoothing out inequalities imposed by birth and other circumstances."

– Indira Gandhi

इग्नू
जन जन का
विश्वविद्यालय
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ

BHIC-109

भारत का इतिहास-V
(*c*.1550-1605)

सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

विशेषज्ञ समिति

प्रो. स्वराज बासु
निदेशक, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. आर. पी. बहुगुणा
इतिहास एवं संस्कृति विभाग
जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

प्रो. फरहत हसन
इतिहास विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. तनूजा कोठियाल
इतिहास विभाग
स्कूल ऑफ लिबरल स्टडीज
अम्बेडकर विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. मयंक कुमार
इतिहास विभाग, सत्यवती कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रो. सैय्यद नजफ़ हैदर
सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

प्रो. पायस मालेकन्दाथिल
सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

प्रो. आभा सिंह
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. ए. आर. खान (*संयोजक*)
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम संयोजक : प्रो. आभा सिंह

सामग्री एवं प्रारूप संपादन : प्रो. आभा सिंह

हिन्दी संयोजक : प्रो. आभा सिंह

पाठ्यक्रम निर्माण दल

इकाई सं.	इकाई लेखक	अनुवादक
1	डॉ. मीनाक्षी खन्ना, इतिहास विभाग, इन्द्रप्रस्थ कॉलेज फॉर विमेन, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली; और प्रो. आभा सिंह, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली	श्री जीतेश कुमार जोशी नई दिल्ली
2	प्रो. आभा सिंह, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली	श्री जीतेश कुमार जोशी, नई दिल्ली
3	प्रो. आभा सिंह, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली	श्री जीतेश कुमार जोशी, नई दिल्ली
4	प्रो. मंसूरा हैदर, सेंटर ऑफ एडवान्स्ड स्टडी इन हिस्ट्री अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़	श्रीमती सीमा कुमारी नई दिल्ली
5	प्रो. इक्तिदार हुसैन सिद्दीकी और डॉ. राजीव शर्मा, सेंटर ऑफ एडवान्स्ड स्टडी इन हिस्ट्री, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़; और डॉ. मीना भार्गव, इंद्रप्रस्थ कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	श्रीमती सीमा कुमारी; और श्रीमती ऊषा मलिक नई दिल्ली
6	डॉ. मीना भार्गव, इंद्रप्रस्थ कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली; और प्रो. मंसूरा हैदर, सेंटर ऑफ एडवान्स्ड स्टडी इन हिस्ट्री अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़	श्रीमती ऊषा मलिक नई दिल्ली
7	डॉ. रंजीता दत्ता, सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज़ जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	श्री जीतेश कुमार जोशी नई दिल्ली
8	डॉ. दिव्या सेठी, सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	श्री जीतेश कुमार जोशी नई दिल्ली
9	डॉ. दिव्या सेठी, सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज़ जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	श्री जीतेश कुमार जोशी नई दिल्ली
10	डॉ. राजीव शर्मा, सेंटर ऑफ एडवान्स्ड स्टडी इन हिस्ट्री अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़	श्रीमती सीमा कुमारी नई दिल्ली
11	प्रो. अनिरुद्ध रे, इस्लामिक इतिहास तथा संस्कृति विभाग कलकत्ता विश्वविद्यालय, कोलकाता	श्रीमती सीमा कुमारी नई दिल्ली
12	प्रो. मोहम्मद अफज़ाल खान, सेंटर ऑफ एडवान्स्ड स्टडी इन हिस्ट्री अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़	श्रीमती सीमा कुमारी नई दिल्ली
13	प्रो. सुनीता ज़ैदी, इतिहास तथा संस्कृति विभाग, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली; और प्रो. ए. आर. खान सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली	श्रीमती सीमा कुमारी नई दिल्ली

14	प्रो. सुनीता ज़ैदी, इतिहास तथा संस्कृति विभाग, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली; और प्रो. ए. आर. खान और डॉ. संगीता पांडे सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली	श्रीमती सीमा कुमारी नई दिल्ली
15	प्रो. ए. आर. खान सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली	श्रीमती सीमा कुमारी नई दिल्ली
16	प्रो. ए. आर. खान, प्रो. रवीन्द्र कुमार; और प्रो. आभा सिंह, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली	श्रीमती सीमा कुमारी; और श्री जफर नकवी, नई दिल्ली
17	डॉ. फिरदौस अनवर, किरोड़ीमल कॉलेज, दिल्ली; और प्रो. आभा सिंह, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली	श्री जफर नकवी; और श्री जीतेश कुमार जोशी नई दिल्ली
18	प्रो. आभा सिंह सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली	श्री जीतेश कुमार जोशी नई दिल्ली

आवरण सज्जा साभार

फोटो साभार : बुलंद दरवाज़ा, फतेहपुर सीकरी, ए. साविन, मार्च 2016 (अंडर फ्री आर्ट लाइसेंस)

फोटो स्रोत : विकीमीडिया कॉमन्स

https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Fatehpur_Sikri_near_Agra_2016-03_img09.jpg

मुद्रण प्रस्तुति	आवरण सज्जा
श्री तिलक राज	**सुश्री अरविन्दर चावला**
सहायक कुलसचिव (प्रकाशन)	ग्राफिक डिज़ाइनर
एम.पी.डी.डी., इग्नू, नई दिल्ली	नई दिल्ली

नवम्बर, 2021

© इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2021

ISBN:978-93-5568-168-3

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कृति का कोई भी अंश, मिमियोग्राफ़ या किसी अन्य रूप में, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना पुनरुत्पादित नहीं किया जा सकता है।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों से सम्बन्धित और अधिक सूचना मैदान गढ़ी, नई दिल्ली स्थित विश्वविद्यालय के कार्यालय से प्राप्त की जा सकती है।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली की ओर से कुलसचिव, एमपीडीडी, इग्नू द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेजर टाइपसेट : ए वन आफसेट प्रिन्टर्स, कीर्ति नगर, नई दिल्ली।

मुद्रक : सरस्वती ऑफसेट प्रिन्टर्स प्रा लि , ए-5 नारायणा इण्डस्ट्रियल एरिया, फेस-2 नई दिल्ली-110028

पाठ्य विवरण

			पृष्ठ संख्या
पाठ्यक्रम परिचय			
खंड I	:	**स्रोत और इतिहासलेखन**	**11**
इकाई 1	:	हिंद-फारसी इतिहास तथा फ़ारसी साहित्यिक परम्पराएँ	13
इकाई 2	:	भारतीय साहित्यिक परम्पराएँ तथा यूरोपीय स्रोत	32
खंड II	:	**भारतीय राजनीतिक व्यवस्था**	**47**
इकाई 3	:	क्षेत्रीय तथा स्थानीय राजव्यवस्थाएँ	49
इकाई 4	:	तैमूरिद साम्राज्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि	59
इकाई 5	:	अफगान राज्य	73
इकाई 6	:	मुगल साम्राज्य विस्तारः युद्ध तथा गठबंधन	94
इकाई 7	:	नायक राज्य	123
खंड III	:	**मुगल शासन का सुदृढ़ीकरण**	**143**
इकाई 8	:	मुगल राज्य का इतिहासलेखन	145
इकाई 9	:	राजत्व की अवधारणा	161
इकाई 10	:	प्रशासनिक संरचना	180
इकाई 11	:	प्रशासनिक संस्थाएँः *मनसब* और *जागीर*	190
इकाई 12	:	मुगल शासक वर्ग का संगठन	200
इकाई 13	:	वित्तीय व्यवस्था	211
खंड IV	:	**आर्थिक प्रक्रियाएँ**	**225**
इकाई 14	:	कृषि अर्थव्यवस्था तथा कृषि संबंध	227
इकाई 15	:	विनिमय अर्थव्यवस्थाः द्रव्य तथा मुद्रा	260
इकाई 16	:	कस्बे, नगर तथा नगरीय केन्द्रों का विकास	267
खंड V	:	**अलौकिक की परिकल्पना**	**279**
इकाई 17	:	राज्य और धर्म	281
खंड VI	:	**साहित्य तथा साहित्यिक अनुवाद**	**297**
इकाई 18	:	संरक्षण तथा साहित्यक संस्कृति	299

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

पाठ्यक्रम अध्ययन संबंधी दिशा-निर्देश

इस पाठ्यक्रम में हमने अध्ययन सामग्री के प्रस्तुतिकरण का समरूप पैटर्न अपनाया है। यह पाठ्यक्रम परिचय से प्रारम्भ होता है, जिसमें कालक्रमानुसार विकास के महत्वपूर्ण चरणों पर प्रकाश डाला गया है। इसमें 6 विशिष्ट खंड हैं, जिन्हें 18 इकाइयों में बांटा गया है। अध्ययन की सुविधा के लिए इकाइयों की संरचना एक समान रखी गई है। इकाई के प्रथम भाग, उद्देश्य का प्रयोजन आपको इकाई के अध्ययन से संबंधित विशिष्ट मुद्दों से अवगत कराता है। कृपया इन उद्देश्यों को ध्यान से पढ़िए और प्रत्येक इकाई के भाग को पढ़ने के बाद खुद पुनः उस पर चिन्तन कीजिए। इकाई की प्रस्तावना आपको इकाई की विषय-वस्तु से परिचित कराती है तथा आपको इकाई की विषय-वस्तु के संबंध में दिशा-निर्देश देती है। तत्पश्चात् पाठ्यक्रम की सुगमता के लिए विभिन्न भागों तथा उपभागों में मुख्य विषय की चर्चा की गई है। इकाई के बीच में बोध प्रश्न दिए गए हैं। हमारा निवेदन है कि आप जब भी इन प्रश्नों तक पहुँचें, इन्हें अवश्य पढ़ें तथा हल करें। यह न केवल आपको, आपके स्वयं अध्ययन के मूल्यांकन में सहायक होगा, बल्कि इससे आप यह भी जांच सकेंगे कि आपने विषय विशेष को कितना समझा। अपने उत्तर की जांच आप सारांश के बाद दिए गए उत्तर संबंधित मुख्य बिंदुओं से कीजिए। प्रत्येक इकाई के अंत में शब्दावली प्रदान की गई है, जिसे इकाई में बोल्ड में दर्शाया गया है। प्रत्येक इकाई के अंत में संदर्भ ग्रंथ सूची भी प्रदान की गई है। इस सूची में उन स्रोतों तथा ग्रंथों की चर्चा की गई है जो आपके अध्ययन के लिए उपयोगी हैं अथवा अध्ययन सामग्री के निर्माण के दौरान प्रयुक्त की गयी है। आप उन पर अवश्य नज़र डालें। हमने कुछ शैक्षणिक वीडियो अध्ययन समझ को बढ़ाने के लिए दिए हैं। कृपया आप इन वीडियो को देखें, यह आपकी संबंधित विषय-वस्तु की व्यापक समझ को बढ़ाने में सहायक होगा।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

पाठ्यक्रम परिचय

एशिया महाद्वीप में, सोलहवीं शताब्दी में, तीन प्रमुख इस्लामी साम्राज्यों का उदय हुआ – ऑटोमन (एशिया माइनर; आधुनिक तुर्की; 1300-1923), सफावी (ईरान; 1501-1722), तथा मुगल (भारत; 1526-1857)। इन तीनों साम्राज्यों में अठारहवीं शताब्दी में पतन के चिह्न नज़र आने लगे थे। ईरान के सफ़ावियों (शिया) और ऑटोमन साम्राज्य (सुन्नी) के बीच तीक्ष्ण प्रतिद्वंदिता थी। इसके विपरीत, सफ़ावी और मुगल साम्राज्य के बीच राजनीतिक संबंध कमोबेश शांतिपूर्ण ही रहे। संभवतः इसके लिए अत्यधिक दूरी प्रमुख उत्तरदायी कारण था। लेकिन, इन तीनों ने वैधता हेतु विभिन्न सत्ताधिकारों का आश्रय लियाः ऑटोमन साम्राज्य ने खिलाफ़त का आश्रय लिया; सफ़ावियों (शाह इस्माइल) ने सातवें इमाम का वंशज होने का दावा किया; वहीं मुगल तुर्क-मंगोल विरासत पर गर्व करते थे। सफ़ावियों के लिए हिंदुस्तान एक अवसरों से भरा क्षेत्र था, जहाँ विद्वान जन और कलाकार तथा योद्धा अपनी क़िस्मत चमकाने के लिए अक्सर ही शरण पाते थे। मुगलों ने मध्य एशिया के मामलों में कभी भी कोई अर्थपूर्ण हस्तक्षेप में हिस्सा नहीं लिया और न ही उन्होंने सफ़ावियों के मंसूबों और महत्वाकांक्षाओं को बढ़ावा दिया और न ही शिया सफ़ावियों के विरुद्ध ऑटोमन-उज़बेक गठबंधन की संभावनाओं को प्रोत्साहित किया।

इसके विपरीत, पन्द्रहवीं शताब्दी के अंत और प्रारंभिक सोलहवीं शताब्दी में मध्य एशिया राजनीतिक उथल-पुथल तथा निरंतर आपसी कलहों से ग्रस्त था। यह पंद्रहवीं शताब्दी के अंत और प्रारंभिक सोलहवीं शताब्दी में ईरानियों, उज़बेक़ों और तुर्कों के बीच निरंतर होने वाले संघर्षों का अखाड़ा बना रहा। अन्य कारक जिसने इस अराजकता को और भी भड़काया, उत्तराधिकार का नियम था जिसने केंद्रीकृत राजव्यवस्था के आधार को ही अवरुद्ध कर दिया था, जिसे स्टीफन डेल (2004: 68) उचित ही रेखांकित करते हैं कि 'तुर्क-मंगोल राज्य दो अंतर्निहित समस्याओं से ग्रस्त थेः राजनीतिक उत्तराधिकार की अनिश्चितता तथा इससे संबंधित शाही और कुलीन खानदानों के पुत्रों के मध्य राज्य-क्षेत्र का बंटवारा करने की प्रथा'। इसने मध्य एशिया में साम्राज्यों के टुकड़ों में विखंडन को जन्म दिया और अक्सर ही जिनका परिणाम भातृ-हंता युद्धों और अराजकता में निकलता था।

मध्य एशिया में मुगलों की कहानी भी कोई अलग नहीं थी। बाबर के दादा अबू सईद मिर्ज़ा ने साम्राज्य को चगताई परंपरा के अनुसार बांटा था। उनके सबसे बड़े पुत्र सुल्तान अहमद मिर्ज़ा को समरकंद और बुखारा, महमूद मिर्ज़ा को हिसार, कुंदूज़, बदख्शां और खुतलान, उलुग़ बेग़ को काबुल और ग़ज़ना; जबकि बाबर के पिता उमर शेख मिर्ज़ा को फ़रगाना का अधिकांश क्षेत्र मिला था। 12 वर्ष की उम्र में बाबर को मध्य एशिया में जिस संघर्ष का सामना करना पड़ा वह इसी विखंडन से उत्पन्न विवाद था। यद्यपि, भारत में मुगलों ने विखंडन के इस विचार को त्याग दिया था (अपवाद स्वरूप केवल हुमायूँ का प्रयोग था, जो अंततः भयावह रूप से असफल हुआ और हुमायूँ को अपने साम्राज्य को अफ़ग़ानों के हाथों गँवाना पड़ा), तथापि वे 'राजनीतिक उत्तराधिकार की अनिश्चितता' का समाधान निकालने में असफल रहे। अकबर के शासनकाल के अंतिम वर्षों में यह स्पष्ट रूप से जाहिर हुआ, जिसका परिणाम अपने पिता के विरुद्ध सलीम (जहाँगीर) के विद्रोह के रूप में निकला। मुगल साम्राज्य संपूर्ण सत्रहवीं शताब्दी और प्रारंभिक अठारहवीं शताब्दी में इससे ग्रस्त रहा, और जिसका परिणाम शाहजहाँ के शासन के अंतिम वर्षों में उत्तराधिकार की गम्भीर भातृ-हंता लड़ाइयों और यहाँ तक कि शाहजहाँ के बंदी बनाए जाने में (यदि हत्या में न भी सही) निकला।

तुर्क-चग़ताई विरासत और परंपरा की इस पृष्ठभूमि के साथ बाबर ने शुरुआत की और आखिरकार वह हिंदुस्तान में मुगलों के पाँव जमाने में सफल हुआ। बाबर के लिए हिंदुस्तान 'सुनिश्चित रूप से विशिष्ट देश' था, अवसरों की भूमि था, यद्यपि अपने मातृ देश की तुलना में यह एक 'बिल्कुल ही अलग देश' था।

खंड I में प्रधानतः साहित्यिक परम्पराओं पर चर्चा की गई है। इस खंड में इस काल के ऐतिहासिक विकास-क्रमों को समझने में स्रोत सामग्री के रूप में फ़ारसी और क्षेत्रीय साहित्यिक परंपराओं और इनके महत्व पर ध्यान केंद्रित किया गया है। **खंड II** बाबर के आक्रमण की पूर्व-संध्या पर हिंदुस्तान की राजनीतिक परिस्थितियों के अध्ययन के साथ शुरू होता है (**इकाई 3**)। यहाँ हमने नए सत्ताधारी

कुलीनों अर्थात मध्य एशिया में मुगलों की पृष्ठभूमि को चिह्नित करने का प्रयास भी किया है (**इकाई 4**)। इसी के साथ हम अफ़ग़ानों से मुगलों की ओर सत्ता के संक्रमण और अंततः हिंदुस्तान में मुगल साम्राज्य की स्थापना, नवीन स्थापित मुगल राज्य के सम्मुख उपस्थित समस्याओं और चुनौतियों, विशेषकर अफ़ग़ानों के साथ मुगलों के संघर्ष, पर भी विचार करेंगे (**इकाई 5**)। यह लोदियों के अधीन अफ़गानों के उदय तथा कालांतर में शेरशाह सूर के अधीन अफ़गान सत्ता की पुनर्स्थापना (द्वितीय अफगान साम्राज्य) के विषय में चर्चा करती है। इस पृष्ठभूमि में, **इकाई 6** युद्ध तथा गठबंधनों के माध्यम से अकबर के अधीन मुगल साम्राज्य के सुदृढ़ीकरण, स्वायत्त सरदारों के साथ अकबर के संबंधों तथा उनके प्रति उसकी नीति की ओर हमारा ध्यान ले जाती है। प्रस्तुत इकाई में मध्य एशिया तथा ईरान के संबंध में मुगल नीति और पूर्वोत्तर क्षेत्र में मुगलों के विस्तार पर भी चर्चा की गई है। अपने पाठ्यक्रम **बी एच आई सी-107** में हम पहले ही विजयनगर साम्राज्य के विकास पर चर्चा कर चुके हैं, यहाँ हमारा ध्यान विजयनगर राजव्यवस्था के कमजोर पड़ जाने के परिणामस्वरूप दक्षिण भारत में *नायक* राज्यों की स्थापना पर रहेगा (**इकाई 7**)।

खंड III मुगल साम्राज्य के सुदृढ़ीकरण पर ध्यान केंद्रित करता है, राजत्व के विचारों को संकल्पनाबद्ध करने से शुरू कर मुगल संप्रभुता को आकार देने (**इकाई 8** तथा **9**), इसकी प्रशासनिक संरचना, (**इकाई 10**), इत्यादि पर। **इकाई 11** में मुग़ल साम्राज्य की स्थिरता और सुदृढ़ता के दो स्तंभों, *मनसब* तथा *जागीर* व्यवस्था के क्रमिक विकास को रेखांकित किया गया है। **इकाई 13** में साम्राज्य के वित्तीय संसाधनों का विस्तृत विश्लेषण, विशेषकर इसकी कराधान व्यवस्था, की व्याख्या की गई है।

खंड IV मुख्य रूप से मुगल साम्राज्य की अर्थव्यवस्था पर केंद्रित है। कृषि अर्थव्यवस्था की प्रकृति और स्वरूप तथा कृषिगत संबंधों को **इकाई 14** में विस्तार से विवेचित किया गया है; जबकि विनिमय अर्थव्यवस्था और द्रव्य तथा मुद्रा व्यवस्था की **इकाई 15** में मीमांसा की गई है। मुगल साम्राज्य की केंद्रीकृत प्रशासनिक संरचना, जिसने शहरी केंद्रों की अभूतपूर्व वृद्धि को जन्म दिया, **इकाई 16** का प्रमुख विषय है। यह इकाई मध्यकाल में शहरी विकास और शहरी अर्थव्यवस्था की प्रकृति और स्वरूप का विस्तृत विवरण प्रदान करती है।

खंड V का मुख्य विषय मुग़ल शासकों की अलौकिक की परिकल्पना पर चर्चा है। यहाँ, हमारा मुख्य ध्यान अकबर की धार्मिक विश्वदृष्टि – किस प्रकार अकबर ने मुग़लों की धार्मिक परिकल्पना को अपनी प्रजा के साथ संबंधों के संदर्भ में गढ़ा और व्याख्यायित किया। *बंदगान-ए दरग़ाह* का उसका विचार, *इबादत ख़ाना* की स्थापना, *महज़र* की घोषणा और अंततः *तौहीद-ए इलाही* जिसने अकबर के धार्मिक विचारों को ठोस रूप प्रदान किया। हमने जैनों, शियाओं, *उलमा* तथा जेसुइटों के प्रति उसके दृष्टिकोण पर भी विचार किया है।

यह पाठ्यक्रम सोलहवीं शताब्दी में भारतीय उपमहाद्वीप में भारतीय साहित्यिक परम्पराओं को प्रदान किए गए संरक्षण पर विस्तृत चर्चा के साथ समाप्त होता है (**खंड VI**)। यह खंड साम्राज्यिक तथा उप-साम्राज्यिक स्तर पर क्षेत्रीय परंपराओं की अंतःक्रिया को रेखांकित करता है। यहाँ यह भी उजागर किया गया है कि फ़ारसी तथा संस्कृत साहित्यिक परम्पराओं का मेल किस हद तक नई साहित्यिक शैलियों के उदय तथा उनके फलने-फूलने में उत्तरदायी था। इस आम अवधारणा के विपरीत कि मुग़ल दरबारी संस्कृति मुख्यतः फ़ारसी रंग-ढंग में रंगी थी, आप संस्कृत तथा अन्य क्षेत्रीय परम्पराओं की जीवंत विद्यमानता को पायेंगे। और 'हमें यह स्वीकारना चाहिए कि मुग़ल सत्ता तथा संप्रभुता की परिकल्पना अक्सर इस्लामीकृत संस्कृति और फ़ारसी साहित्यिक रचनाओं से पूर्णतः बाहर संचालित थी' (ट्रुश्के 2016: 62)।

पाठ्यक्रमों के निर्माण में हमारा मुख्य उद्देश्य हमेशा से 'निरंतरता' तथा 'परिवर्तन' पर रहा है। अतः प्रस्तुत पाठ्यक्रम **बी एच आई सी-109** को पाठ्यक्रम **बी एच आई सी-112** के साथ पढ़ा जाना चाहिए। बिना सत्रहवीं शताब्दी के विकास-क्रमों (**बी एच आई सी-112**) को समझे सोलहवीं शताब्दी का अध्ययन (**बी एच आई सी-109**) पृथक् रूप से नहीं किया जा सकता है। हमने **बी एच आई सी-109** में उन विशेषताओं तथा मुगल संस्थाओं को शामिल किया है जो अकबर के शासनकाल (सोलहवीं शताब्दी) में दृढ़ता से स्थापित हो चुकी थीं, वहीं जिनका विकास विशिष्ट रूप से सत्रहवीं शताब्दी में

हुआ उन्हें **बी एच आई सी-112** में शामिल किया गया है। हमने **बी एच आई सी-109** में मुग़ल-दक्खन तथा मुग़ल-राजपूत सम्बन्धों की चर्चा नहीं की है, इसके बजाय **बी एच आई सी-112** में इन दोनों का व्यापक विश्लेषण किया गया है। इसी प्रकार, व्यापार तथा वाणिज्य, वाणिज्यिक गतिविधियों, मुग़ल कला तथा स्थापत्य, दरबारी संस्कृति, इत्यादि का **बी एच आई सी-112** में व्यापक विश्लेषण किया गया है। वहीं मुख्य प्रशासनिक संस्थाएँ, कुलीन-वर्ग (*उमरा*) की संरचना, मुग़ल वित्तीय संरचना, *मनसब* तथा *जागीर*, यह सभी **बी एच आई सी-109** में हमारी चर्चा के केंद्र में हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

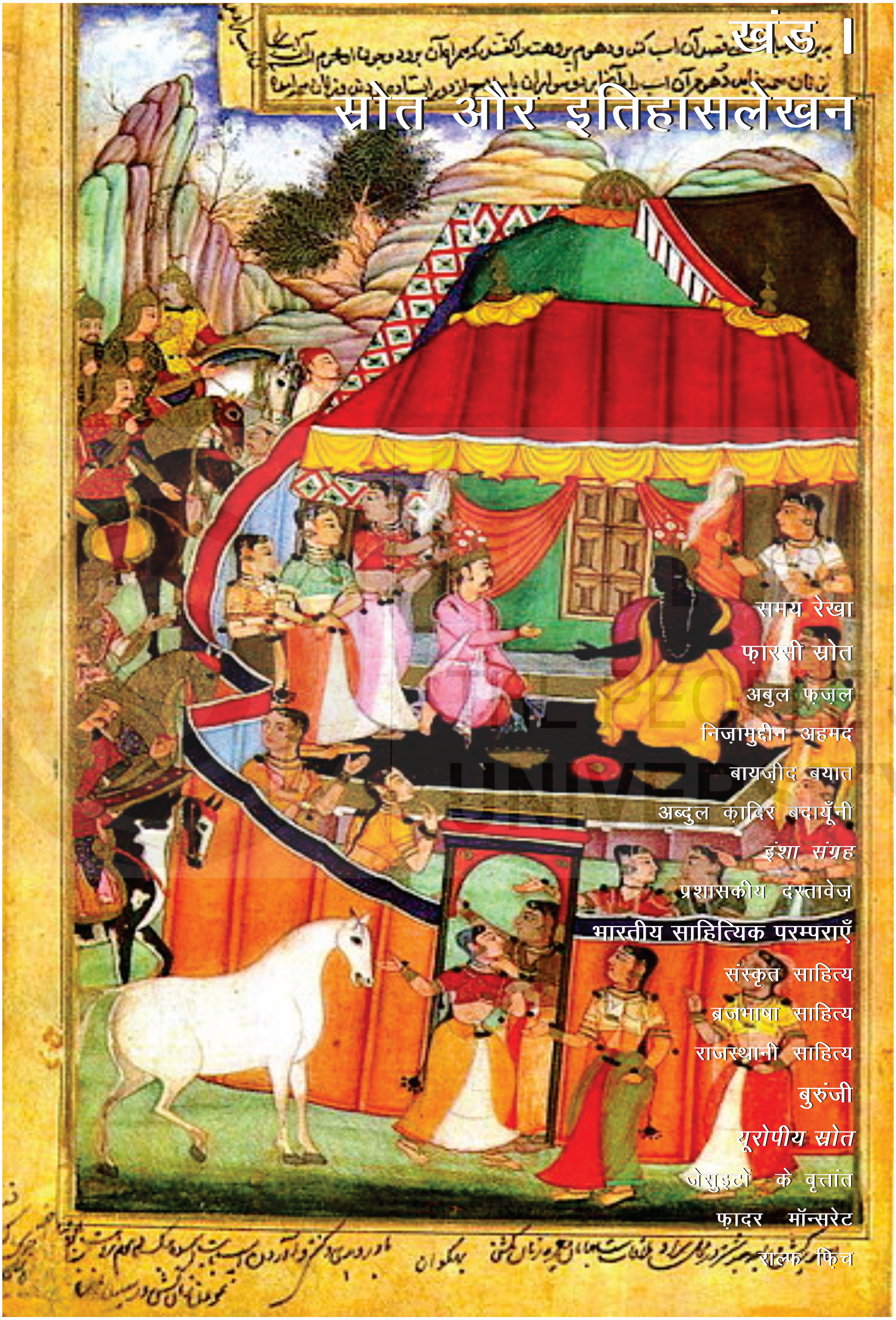

खंड I

स्रोत और इतिहासलेखन

समय रेखा

फ़ारसी स्रोत

अबुल फ़ज़ल

निज़ामुद्दीन अहमद

बायज़ीद बयात

अब्दुल क़ादिर बदायूँनी

इंशा संग्रह

प्रशासकीय दस्तावेज़

भारतीय साहित्यिक परम्पराएँ

संस्कृत साहित्य

ब्रजभाषा साहित्य

राजस्थानी साहित्य

बुरुंजी

यूरोपीय स्रोत

जेसुइटों के वृत्तांत

फ़ादर मॉन्सरेट

राल्फ फ़िच

कृष्ण के राजनिवास की स्त्रियों के सम्मुख यज्ञ के घोड़े का प्रदर्शन, *रज़्मनामा* से एक पृष्ठ

चित्रकार	:	भगवान, 1598
फोटोग्राफ स्रोत	:	British Museum; http://legacy.lclark.edu/~campion/hist259/paint2.htm http://www.bl.uk/manuscripts Viewer. aspx? ref=or_ 12076_ f017r&_ga= 2.44228452. 1955518749. 1508058994 -1313856845.150805899
स्रोत	:	https://commons.wikimedia.org/wiki/File:The_Ladies_of_Krishna%27s_ Harem_are_ shown_the_ Sacrificial_Horse.jpg

इकाई 1 हिंद-फ़ारसी इतिहास तथा फ़ारसी साहित्यिक परम्पराएँ*

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 भारत में मुग़ल आक्रमण की पूर्व संध्या पर फ़ारसी भाषा तथा साहित्य

1.3 फ़ारसी भाषा में इतिहास लेखनः स्वरूप, पद्धति, तथा उद्देश्य

1.3.1 इतिहास के रूप में संस्मरण तथा अन्य जीवनीपरक लेखन

1.3.2 सार्वभौमिक तथा वंशगत इतिहासः अबुल फ़ज़ल

1.3.3 काव्य रचनाएँ

1.4 *इंशा-नवीसी* या प्रारूप-लेखन की कला

1.5 आधिकारिक दस्तावेज़

1.6 *अख़लाक़* साहित्य

1.7 भारतीय रचनाओं के फ़ारसी अनुवाद

1.8 सारांश

1.9 शब्दावली

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.11 संदर्भ ग्रंथ

1.12 शैक्षणिक वीडियो

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपः

- मध्य काल में भारत में नव-प्रचलित राजनीतिक संस्कृति की संवृद्धि तथा विकास को समझ पाएँगे,
- फ़ारसी विद्वानों के भारतीय साहित्यिक परम्पराओं के साथ अंतर्संवाद के विषय में जान पाएँगे,
- यह जानेंगे कि फ़ारसी इतिहासलेखन में किस प्रकार संस्मरण/आत्मकथा तथा जीवनी लेखन परम्पराओं का विकास हुआ,
- अपनी अनूठी विशेषताओं के साथ *तवारीख/तारीख़* परम्परा की निरंतरता का मूल्यांकन कर पाएँगे,
- इस काल की काव्य रचनाओं के बदलते लोकाचार का परीक्षण कर पाएँगे,
- *इंशा* परम्परा की संवृद्धि तथा विकास का मूल्यांकन कर पाएँगे,
- *अख़लाक़* जैसी नई साहित्यिक विधाओं को चिह्नित कर पाएँगे, और

* डॉ. मीनाक्षी खन्ना, इन्द्रप्रस्थ कॉलेज फॉर विमेन, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली; और प्रो. आभा सिंह, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

- *मकतब-ख़ाना* के विकास तथा इसके संस्कृत साहित्यिक परम्परा के साथ अंतर्संवाद को रेखांकित कर पाएँगे।

1.1 प्रस्तावना

हमारा अध्ययन काल प्रमुख ऐतिहासिक परिवर्तनों से परिलक्षित होता है जिन्हें उत्तर भारत में चौदहवीं तथा सोलहवीं शताब्दी के बीच विद्यमान रहे राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक तथा तकनीकी कारकों ने आकार दिया था। आप पढ़ेंगे कि कैसे इन परिवर्तनों ने भारतीय इतिहास में 'पूर्व-आधुनिक' चरण की शुरुआत का शंखनाद किया। उत्तर भारत में ग़ज़नवी आक्रमणों के साथ फ़ारसी संस्कृति का पदार्पण हुआ। इस काल में एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक बदलाव देखने को मिलता है, जैसा कि फ़ारसी भाषा ने संपर्क भाषा का दर्ज़ा हासिल किया जो भारत की बहुभाषी तथा बहु-धर्मी विविधता के बीच एक सेतु बन गई थी। जिसने इसके साथ ही उपमहाद्वीप को पूर्वी इस्लामी दुनिया के साथ भी जोड़ दिया था।

मुग़ल मूल रूप से तुर्की भाषा की चग़ताई तुर्की बोली बोलते थे, लेकिन प्रशासनिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के सार्वजनिक संचार की पसंदीदा भाषा फ़ारसी थी। इस इकाई में आप यह जानेंगे कि क्यों और कैसे फ़ारसी मुग़ल दरबार और संचार की प्रमुख भाषा बन गई। इन परिवर्तनों में एक बदली हुई विश्वदृष्टि रेखांकित होती है। मुग़ल-भारत के हिंद-फ़ारसी इतिहासकारों के लेखनों में दुनिया को देखने के नए तरीक़ों की अभिव्यक्ति सामने आती है, जिसमें अतीत की घटनाओं की व्याख्या दैवीय हस्तक्षेप के बजाय मानवीय कृत्यों के रूप में की गई। लेकिन, इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मुग़ल इतिहासकारों ने दैवीय हस्तक्षेप को पूरी तरह से अनदेखा कर दिया था, बल्कि पहले के तुर्क-अफ़ग़ान इतिहासकारों के लेखनों के मुक़ाबले इनमें नियतिवाद का तत्व कम था। इस प्रकार, इतिहासलेखन 'धर्मनिरपेक्ष' सरोकारों को प्रकट करता है, जब यह अधिक धार्मिक तथा नीतिपरक दृष्टिकोण से दूर हटता है।

हिंद-फ़ारसी इतिहासलेखन की अन्य महत्वपूर्ण विशेषता को संस्मरण या आत्मकथा के लेखन में देखा जा सकता है जो किसी व्यक्ति के आत्म-वर्णन पर केंद्रित होता था। इतिहास को दर्ज़ करने के पूर्व-प्रचलित पैटर्न (*तारीख़/तवारीख़*) जारी रहे; लेकिन, घटनाओं का बखान अब बदली हुई विश्वदृष्टि की चेतना के साथ किया जा रहा था जिसमें उस समय की एक नवीन धर्मनिरपेक्षता झलकती थी। इतिहास-संबंधी रचनाओं के अतिरिक्त अन्य प्रकार की गद्य तथा पद्य रचनाओं ने सोलहवीं शताब्दी के बदलते लोकाचारों को ग्रहण किया था। भारतीय कृतियों के फ़ारसी अनुवादों को विशेष स्थान दिया गया था, जो मुख्यतः उस नई साम्राज्यिक विचारधारा से अनुप्रेरित था जो सल्तनत काल के *शरिया* के निर्देशात्मक विमर्श से हटकर भारत में बहु-सांस्कृतिक समाज पर शासन करने के सरोकारों की ओर उन्मुख हो गई थी।

इस सांस्कृतिक तथा साहित्यिक बदलाव के वाहक फ़ारसी के जानकार बुद्धिजीवी, लिपिक तथा उनके दरबारी संरक्षण-दाता थे, जो ईरान, मध्य एशिया तथा हिंदुस्तान में स्थित विविध नृजातीय तथा धार्मिक पृष्ठभूमियों से आए थे। ये आयाम उस काल के हिंद-फ़ारसी साहित्यिक व्यवहारों के नगरीय तथा सार्वदेशिक चरित्र की व्याख्या करते हैं। इस इकाई में आप लिपिकों (*ख़ुत्ताब*) तथा सचिवों (*मुंशी*) की संस्कृति के बारे में भी जानेंगे, जो लेखक या संकलनकर्ता थे, कुछ उच्च पदों पर आसीन थे और कई मुग़ल सचिवालय (*दीवान-उल रसाइल* या *दीवान-उल इंशा*) में नियुक्त थे। सोलहवीं शताब्दी की इस हिंद-फ़ारसी परम्परा ने एक विशिष्ट शैली का परिष्करण किया था, जिसे *सबक-ए हिंदी* कहते थे। सरकारी आदेश, दरबारी तारीख़ें, काव्य, दार्शनिक तथा रहस्यवादी धारणाएँ, प्रेम, आश्चर्य तथा यात्राओं की कथाएँ सम्पूर्ण उपमहाद्वीप में प्रसारित हो रही थीं। भारत में छपाई की तकनीक की अनुपस्थिति के कारण शहरी शिक्षितों के बीच विचारों के प्रसार का मुख्य माध्यम परस्पर-परिचर्चा और हस्तलिखित पांडुलिपियों का प्रसार था। हिंद-फ़ारसी पांडुलिपियों का विशेष महत्व है क्योंकि ये हस्तनिर्मित *काग़ज़* पर तैयार असाधारण रचनाएँ थीं, जिनमें मनोहर, सुलेखन तथा शानदार चित्रण किया जाता था। आप यह भी जानेंगे कि पांडुलिपियाँ लिखित शब्दों का दृश्यात्मक निरुपण मात्र नहीं थीं बल्कि संरक्षणदाताओं का आत्म-निरुपण भी थी।

1.2 भारत में मुग़ल आक्रमण की पूर्व संध्या पर फ़ारसी भाषा तथा साहित्य

जब 1526 में बाबर ने भारत में मुग़ल साम्राज्य की नींव रखी, फ़ारसी भाषा पाँच सौ सालों से भी अधिक समय से मुस्लिम अभिजात्यों के विभिन्न वर्गों द्वारा प्रयोग में लायी जा रही थी, जिसमें भारतीय उपमहाद्वीप के पश्चिमी, पूर्वी तथा दक्खनी क्षेत्र के प्रशासक, साहित्यिज्ञ तथा धर्मज्ञ लोग शामिल थे। ग्यारहवीं और पंद्रहवीं शताब्दी के बीच भारत में फ़ारसी भाषा में इतिहास लेखन समेत, फ़ारसी साहित्यिक परिवेश के प्रारंभिक इतिहास का संक्षिप्त सर्वेक्षण करना तथा उन ऐतिहासिक प्रक्रियाओं का उल्लेख करना जिन्होंने इस विशाल और विविध फ़ारसी ग्रंथों के भंडार को सृजित किया, उपयोगी सिद्ध होगा (विस्तृत जानकारी के लिए देखें **बी एच आई सी-107**, **इकाई 1**)।

प्रारंभिक ग्यारहवीं शताब्दी में उत्तर-पश्चिम भारत में ग़ज़नवी आक्रमण (997-1187) भारत में मुस्लिम वंशों तथा 'फ़ारसीकृत'[1] संस्कृति के प्रसार को चिह्नित करती है। ग़ज़नवी नृजातीय रूप से तुर्क थे तथा बुखारा (दक्षिणी उज़बेकिस्तान) के सामानी वंश (819-999) के ईरानी राजाओं के ईरानीकृत (ईरानीकरण; Pesianate) रंग में रंगे ग़ुलाम थे। जब ग़ज़नवियों ने अपने स्वतंत्र वंश की स्थापना की तो उन्होंने सामानी वंश के प्रशासनिक व सांस्कृतिक व्यवहारों का अनुपालन जारी रखा, जिन्होंने अन्य वंशों की तरह फ़ारसी पुनर्जागरण[2] (*c.* 900-1100) को संरक्षण प्रदान किया था जो इस्लाम-पूर्व ईरान (सातवीं शताब्दी में मुस्लिम अरबों द्वारा ईरान की विजय से पहले के) तथा अरब मुस्लिमों की मिश्रित सांस्कृतिक विरासत की परंपराओं का प्रतिनिधित्व करते थे। सांस्कृतिक आंदोलन का भाषायी आयाम दसवीं शताब्दी में नवीन फ़ारसी भाषा – ईरान की मूल मध्य-फ़ारसी तथा सातवीं शताब्दी में ईरान में लायी गई अरबी शब्दावली तथा लिपि का मिश्रण – के उदय में परिलक्षित होता है। इस 'नवीन फ़ारसी' (आगे से, फ़ारसी) को सामानियों द्वारा साहित्यिक अभिव्यक्ति तथा सरकारी नौकरशाही के माध्यम के रूप में संरक्षण प्रदान किया गया। निरंकुश राजतंत्र की प्राचीन ईरानी परंपराओं, न्याय, नौकरशाही के आदर्श, नृजातीय और धार्मिक विषयों में सांस्कृतिक बहुलवाद, कला तथा स्थापत्य, साहित्यिक आचार तथा इतिहास लेखन के साथ अरब-इस्लामी संसार के विचारों को संकलित किया गया। उदाहरण के लिए, सामानियों द्वारा तबरी द्वारा अरबी भाषा में लिखे गए मुस्लिमों के सार्वभौमिक इतिहास, *तारीख-उल रसूल वल-मलूक* (पैगंबर मुहम्मद तथा राजाओं का इतिहास) के बलामी द्वारा किए गए फ़ारसी रूपांतरण को संरक्षण प्रदान किया गया। सामानी वंश के संरक्षण में फ़िरदौसी ने *शाहनामा* (राजाओं का इतिहास) लिखना शुरू किया, इस इस्लाम-पूर्व ईरान के इतिहास तथा पौराणिक-कथाओं के फ़ारसी महाकाव्य में सिकंदर महान् की कथा भी शामिल थी। इतिहासकार रिचर्ड एम-ईटन के अनुसार, बलामी ने प्रारम्भिक इस्लामी इतिहास की विरासत को फ़ारसीकृत दुनिया के लिए ग्रहण किया तो फ़िरदौसी ने सिकंदर महान् को ईरानी पूर्वज परंपरा में शामिल कर इस्लाम-पूर्व ईरान और ग्रीक-साम्राज्यवाद की विरासत को इसी प्रकार स्थान दिया। इस प्रकार के ग्रंथों में गद्य तथा पद्य रचनाओं के रूप में प्रस्तुत, 'ईरानी-इस्लामी' विश्वदृष्टि की विशेषताएँ शामिल थीं, जिन्हें शाही संरक्षण की तलाश में यात्रा करने वाले घुमक्कड़ चारणों द्वारा प्रसारित किया जाता था। अक्सर सैन्य, व्यापारिक गतिविधियों तथा तीर्थयात्राओं के मार्गों की दिशाओं में आठवीं तथा नौवीं शताब्दी में काग़ज़ की तकनीक के आगमन के साथ लेखक तथा लिपिक समुदायों ने ग्रंथों के प्रचार-प्रसार को गति प्रदान की। मध्य एशियाई, ईरानी तथा अफ़ग़ानी समुदायों की बहुभाषी तथा बहु-धार्मिक दुनिया में लोगों ने फ़ारसी को स्वीकार किया क्योंकि अरबी तथा तुर्की की तरह फ़ारसी की कोई नृजातीय या धार्मिक पहचान नहीं थी। ये कारक हमारे सम्मुख व्याख्या करते हैं कि कैसे फ़ारसी इन शताब्दियों में विभिन्न नृजातीय समूहों, दरबारों, साहित्यिकों, कलाकारों, लिपिकों, सूफ़ियों तथा व्यापारियों के बीच सम्पर्क के शक्तिशाली माध्यम के रूप में उदित हुई। तेरहवीं तथा चौदहवीं शताब्दियों में मध्य एशिया तथा उत्तरी ईरान में मंगोल तबाही के बाद भी फ़ारसी दरबारों की शक्तिशाली भाषा और इस क्षेत्र में रोज़मर्रा के प्रयोग की भाषा के रूप में बनी रही।

---

[1] फारसी/ईरानीकरण ('Persianate') एक नवीन संज्ञा है जिसे इतिहासकार मार्शल जी. हॉजसन ने गढ़ा था।

[2] ब्रिटिश प्राच्यवादी जी. ब्राउन ने 'फारसी पुनर्जागरण' की अवधारणा को गढ़ा था, एक सांस्कृतिक आंदोलन के रूप में जिसका संदर्भ फारसी साहित्यिक गतिविधियों के उत्कर्ष से है जो पहले-पहल मध्य एशिया तथा खुरासान (उत्तर-पूर्वी ईरान) में नज़र आया था। इस साहित्यिक हलचल का विस्तार सम्पूर्ण फ़ारसी भाषी जगत में था तथा ग्यारहवीं शताब्दी में ग़ज़नवी सुल्तानों के अधीन यह अपने चरम पर पहुँचा।

ग़ज़नवी सुल्तानों के दरबार में सृजित फ़ारसी साहित्य ने उन विषयवस्तुओं तथा रचनाओं की शैलियों को परिभाषित किया जो भारत में आने वाली पीढ़ियों के फ़ारसी विद्वानों को दिशा दिखाने वाली थीं। इस साहित्य-सम्पदा में महमूद ग़ज़नी के काल में 1010 में पूरा हुआ फ़िरदौसी (940-1020) का महाकाव्य *शाहनामा*; दरबारी कवियों फ़ारूखी, मनुचेहरी, सनाई, साद-ए सलमान तथा अन्य कवियों द्वारा सृजित विपुल फ़ारसी प्रशस्तिपरक तथा गीतात्मक काव्य; तथा अबुल फ़ज़ल बैहाक़ी की *तारीख-ए बैहाक़ी* (बैहाक़ी का इतिहास) शामिल हैं। भारतीय इतिहास के लिए अत्यधिक महत्व की अन्य कृति पंजाब के ग़ज़नवी प्रांत में रची गई, किंतु यह फ़ारसी साहित्य सम्पदा के लिए एक अपवाद थी, यह अबु रेहान बिरूनी की *किताब-उल हिंद* (हिंदुस्तान का इतिहास) थी, जो उत्तर भारतीय ब्राह्मणीय संस्कृति तथा प्राकृतिक इतिहास का अरबी भाषा में रचित अध्ययन है। लाहौर में ग़ज़नवी राजधानी की स्थापना के बाद पूर्वी इस्लामी दुनिया के व्यापक समृद्ध क्षेत्र से व्यापार, साहसिक अभियानों और संरक्षण की तलाश में आए फ़ारसी-भाषी आप्रवासी उत्तर भारत में आकर बस गए। आप्रवासी शासक, प्रशासक, साहित्यज्ञ, दानिशमंद, धर्मवेत्ता, व्यापारी तथा सूफ़ी नृजातीय रूप से तो भिन्नता रखते थे किंतु बुखारा तथा ग़ज़नी में साकार हुई फ़ारसी परम्पराओं में सांस्कृतिक रूप से एकसूत्र में बंधे थे। भारत में, लाहौर फ़ारसी साहित्यिक सृजन का नया गढ़ बन गया जहाँ अबुल फ़राज़ रुनी, साद-ए सलमान जैसे कवि गीतात्मक काव्य लिख रहे थे। प्रोफ़ेसर शिमेल के अनुसार, साद-ए सलमान ने फ़ारसी में संस्कृत की *बारहमासा* विधा, वर्ष के महीनों तथा ऋतुओं का वर्णन करने वाली कविताओं, की शुरुआत की थी। यह 'हिंद-फ़ारसी' साहित्यिक संस्कृति का शुरुआती उदाहरण है क्योंकि यह दर्शाता है कि किस तरह फ़ारसी अपने दायरे में भारतीय परम्पराओं को ग्रहण कर रही थी। यह लाहौर ही था जहाँ सूफ़ी शेख़ अली बिन उस्मान हुज्वीरी जुल्लाबी ने *कश्फ-उल महजूब* (रहस्य का रहस्योद्घाटन) की रचना की थी। यह सूफ़ीवाद पर एक शुरुआती फ़ारसी निबंध-ग्रंथ था जिसमें जीवनीपरक लेखन (*तज़किरा*) के तत्व भी निहित थे और सूफ़ी वार्ताओं (*मलफ़ूज़ात*) को भी शामिल किया गया था। इन कृतियों का इतिहास लेखन से प्रत्यक्ष संबंध न भी हो तो ये ग्रंथ भारत में सल्तनत-निर्माण के शुरुआती चरणों के सामाजिक, बौद्धिक, राजनीतिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक आयामों के अध्ययन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण स्रोत हैं।

यद्यपि, इसकी शुरुआत गज़नवियों ने की थी किंतु भारत में फ़ारसी संस्कृति की जड़ों का रोपण ग़ौरियों (1148-1206) द्वारा किया गया था। 1173-1174 में ग़ज़नी पर कब्ज़ा करने के बाद सुल्तान मुइज़ुद्दीन मुहम्मद बिन साम ग़ौरी ने अपने तुर्की गुलामों और ख़लजी-अफ़ग़ान सेनानायकों के साथ गोमल दर्रे के रास्ते भारत पर आक्रमणों की शुरुआत की और उच्छ तथा मुल्तान (1175), लाहौर (1186), गंगा के मैदानी क्षेत्रों, अजमेर तथा बंगाल (1203) पर कब्ज़ा कर लिया। ग़ौरियों ने 1192 में दिल्ली को अपनी राजधानी घोषित की तथा यह शहर सम्पूर्ण दिल्ली सल्तनत के काल (1206-1398) में विभिन्न शासक वंशों के लिए सत्ता तथा संरक्षण का केंद्र बना रहा। विभिन्न प्रकार का गद्य साहित्य, जिसमें वंशावलियाँ (*शजरा*), *तारीख़*, (इतिहासलेखन), आचार-शास्त्र (*अख़लाक़*), परामर्शी साहित्य (*नसीहात*), जीवनियाँ (*तज़किरा*), वार्ता-रूपी विमर्श (*मलफ़ूज़ात*), पत्र-संग्रह (*मकतूबात*), प्रारूप-लेखन (*इंशा*); विभिन्न रूपों में काव्य रचनाएँ – *क़सीदा, मसनवी, ग़ज़ल*; इसके साथ ही प्रशासनिक आदेशों को दर्ज़ करने वाले सरकारी दस्तावेज़ों के भंडार का भारत में, फ़ारसी कृतियों में परिभाषित साहित्यिक आधार पर, सृजन हुआ। *तारीख़ी* इतिहास का वर्णन साहित्यिक संरक्षण का एक महत्वपूर्ण आयाम था।

तेरहवीं तथा चौदहवीं शताब्दी के दौरान भारत में फारसी में लिखे गए हिंद-फारसी इतिहास लेखन के महत्वपूर्ण पहलुओं को इस प्रकार सारबद्ध किया जा सकता है। प्रथमतः, *तारीख़* संबंधी लेखनों में, फ़ारसी-इस्लामी संज्ञा में व्यक्त दो विशिष्ट सांस्कृतिक परंपराएं निहित हैं। यह शब्द इस्लाम पूर्व तथा इस्लामी-फ़ारसी *तारीख़* की चेतना को व्यक्त करता है; और यह घटनाओं को इस्लाम के इतिहास की पृष्ठभूमि में रखकर देखता है ताकि इस्लाम के आदर्श मूल्यों को सुस्थापित किया जा सके। उदाहरण के लिए, इस्लामी *तारीख़* तथा वंशावली पर रचे गए मुहम्मद गौरी के सरंक्षण में लिखित, शुरुआती गद्य ग्रंथ फख्र-ए मुदब्बिर के *शजरा-ए अंसाब* (1206; वंश-वृक्ष), से यह पहलु सुस्पष्ट होता है। इस *शजरा* में आदम के बाद से लेकर ग़ौरियों तक 139 वंशावलियाँ शामिल हैं। इन वंशावलियों का उद्देश्य नातेदारी के संबंधों और इस्लाम के सार्वभौमिक इतिहास को वंश-वृक्ष के रूप में दर्शाना था। बाद में मिन्हाज-ए सिराज जुज़्जानी ने अपनी *तबकात-ए नासिरी* (1259; नसीरी सारणी) में *शजरा* का प्रयोग अपने ग़ौरी संरक्षणदाता को ईरानी मूल प्रदान करने तथा राजनीतिक वैधता पाने हेतु उसका

अब्बासी ख़लीफ़ाओं से संबंध दर्शाने के लिए किया। इसके अतिरिक्त, जहाँ निरंकुश राजतंत्र और न्याय के विचार विख्यात ईरानी राजाओं जमशेद, नौशेरवां तथा फ़रीदुन से प्रेरित विषय थे, इसके साथ ही इतिहासकारों ने *ग़ाज़ी* सुल्तान की छवि का उपयोग अपने मुस्लिम संरक्षणदाता की प्रशंसा हेतु किया। इस्लाम-पूर्व ईरान के इन तत्वों तथा इस्लाम के पवित्र इतिहास को, भारत में फ़ारसी इतिहास लेखन की वर्णनात्मक युक्ति में, पाठक को सार्वभौमिक, परा-क्षेत्रीय तथा परा-सांस्कृतिक तत्वों से परिचित कराने के लिए बारम्बार प्रयोग में लाया जाता था।

ज़ियाउद्दीन बरनी (1285-1357) के लेखन में नैतिकता के तत्व का सुस्पष्ट उल्लेख है। उसने लिखा है कि *तारीख* (इतिहास), जैसे स्वयं उसकी *तारीख-ए फ़िरोज़शाही* (फिरोज़शाह का इतिहास), *हदीस* (पैग़म्बर मुहम्मद की परम्पराएँ) की संपूरक है और इसका शैक्षिक उद्देश्य है। इसी तरह, इतिहास को सुन्नी इस्लाम की शिक्षाओं पर आधारित नैतिकता की शिक्षा देने के नज़रिए से लिखा जाना चाहिए। जहाँ यह *तारीख़* ईरानी-इस्लामी रीति की इस्लामी धारा को व्यक्त करती है; वहीं बरनी की *फ़तावा-ए जहाँदारी* (दुनियावी शासन पर निर्णय) इस्लामी तथा ईरानी धारणाओं का मिश्रण प्रस्तुत करती है। इतिहासलेखन तथा परामर्शी लेखन (*नसीहात/अंदर्ज़*) की साहित्यिक शैलियों को मिलाकर लिखा गया यह निबंध-ग्रंथ ग़ज़ना के सुल्तान मुहम्मद को अपने पुत्रों को मुस्लिम शासक के कर्तव्यों पर परमर्श देते हुए पेश करता है। लेखक प्रथम चार ख़लीफ़ाओं के बाद मुस्लिम राजव्यवस्था के आदर्शों के भ्रष्ट हो जाने पर दुःख प्रकट करता है और यह भी स्वीकारता है कि इस्लामी शिक्षाओं के अनुसार शासन करना असम्भव होता। बरनी, अतः, भारतीय-मुस्लिम शासकों के सामने इस्लाम-पूर्व ईरानी शासकों की सांस्कृतिक रूप से समावेशी रीतियों को अपनाने तथा साथ ही अपनी मुस्लिम प्रजा के हितों को संतुलित करने का एक व्यावहारिक समाधान पेश करता है।

अमीर खुसरो की रचनाओं में एक अलग तरह का इतिहास-लेखन उपलब्ध है। भारत में जन्मा तुर्क अमीर खुसरो (1253-1325) जो स्वयं को *तूती-ए हिंद* ('हिंदुस्तान का तोता') कहकर पुकारता है, अपनी असाधारण प्रतिभा को भारत में फ़ारसी साहित्यिक तथा संगीत परम्पराओं के नवाचार के रूप में साकार करता है। खुसरो का कृतित्व ग़ज़नवी या ग़ौरी दरबारों में *क़सीदों* के रूप में लिखी प्रशस्तियों वाले साहित्य के नमूने पर आधारित नहीं था और न ही खुसरो जुज़्जानी की तरह वर्षवार विवरण पेश करता है। उसका मुख्य योगदान *इहाम* (श्लेष वक्रोक्ति) तथा *ख़याल* (काव्यात्मक कल्पना) की साहित्यिक शैलियों के प्रयोग करना; ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में तथा *मसनवी* शैली में घटना-प्रधान वर्णन; तथा नई शैली में पत्र-लेखन रहा है। तथापि, यह काव्यात्मक वर्णन दरबारी जीवन के पहलुओं, सूफ़ी परंपरा तथा इस काल में फ़ारसी-इस्लामी संस्कृति के विकास की व्याख्या करने के लिए उपयोगी है।

इस काल में फ़ारसी इतिहास लेखन का अन्य पहलू मानव अस्तित्व को आकार देने वाली घटनाओं की व्याख्या के तत्व से संबंध रखता है। मध्यकालीन इतिहासकारों की समझ में ऐतिहासिक घटनाओं के कार्य-कारण की मुख्यतः *तक़दीर* (भाग्य) के रूप में व्याख्या की जाती थी और मानवीय प्रयासों की भूमिका को कम महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता था।

तैमूर के बाद फ़ारसी

उत्तर भारत में तैमूर के सैन्य अभियानों ने दिल्ली की राजनीतिक सत्ता को प्रतिस्थापित कर दिया (1398) और इसने, निस्संदेह, फ़ारसी साहित्यिक कृतियों को प्रदत्त संरक्षण को कमजोर किया। तैमूर-पश्चात् काल (*c.* 1398-1556), जिसे दिल्ली सल्तनत का सांध्य-काल तथा 'दीर्घ पन्द्रहवीं शताब्दी' के रूप में भी जाना जाता है, में फ़ारसी का क्या दर्ज़ा था? एक ओर तो, ऐसा कुछ इतिहासकारों का मत है कि फ़िरोज़ शाह तुग़लक़ की मृत्यु (1388) तथा अकबर के सिंहासनारोहण (1556) के बीच का काल फ़ारसी ग्रंथों के अभाव में परिलक्षित होता है, जो भारतीय परिवेश में फ़ारसी के 'संकट' का संकेत करता है। वहीं दूसरी ओर, विद्वानों का यह भी मत है कि इस काल में फ़ारसी भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश में और गहरी जड़ें जमा रही थी। जहाँ फ़ारसी उत्तर भारत तथा दक्खन में नवीन मुस्लिम राजनीतिक अभिजात्य की भाषा थी, वहीं संस्कृत तथा अन्य क्षेत्रीय भाषाएँ, राजनीतिक तथा प्रशासनिक, धार्मिक तथा भक्ति, साहित्यिक तथा दार्शनिक विमर्श की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बनी रहीं। इसके अतिरिक्त, यह काल परा-सांस्कृतिक (ईरानी-भारतीय) तथा बहुभाषी गतिविधियों के लिए जाना जाता है जिसने उन साहित्यिक तथा इतिहासलेखन की प्रवृत्तियों की शुरुआत की जो मुग़लों के अधीन परिपक्व हुईं।

जब राजनीति का केंद्र दिल्ली से क्षेत्रीय सल्तनतों तथा राजपूत राज्यों की ओर विस्थापित हुआ, हमें कोई भी ऐसा व्यापक साम्राज्यिक ऐतिहासिक रचना देखने को नहीं मिलती है, जैसी दिल्ली में लिखी गई थीं। इसके बजाय, हमारे पास इन नए संप्रभु राज्यों में, जो पहले दिल्ली के अधीन थे, संकलित साधारण राजनीतिक इतिहास मिलते हैं। बहुत से विद्वान, व्यापारी तथा दस्तकार दिल्ली से उत्प्रवासित हुए तथा इन्होंने मालवा, जौनपुर, गुजरात, कालपी तथा दक्खन के क्षेत्रीय राज्यों में आश्रय पाया। इसने क्षेत्रीय शासकों के लिए, दिल्ली सल्तनत के शासकों द्वारा स्थापित शैली में, क्षेत्रीय इतिहास लेखन को संरक्षण प्रदान करने की परिस्थितियों का निर्माण किया। इस तरह का एक प्रसंग मुहम्मद बिहमद ख़ानी की *तारीख़-ए मुहम्मदी*, कालपी का इतिहास है, जो जुज़्जानी के इस्लामी दुनिया के सार्वभौमिक इतिहास की अवधारणा पर आधारित है, और जो वंशावली का उपयोग कर वर्तमान संरक्षणदाता की पहचान को पीछे ले जाकर उसे इस्लामी समुदाय के मूल में तलाशता है। दक्खन में, बहमनिद सल्तनत (1347-1527) के शासक फ़ारसी संस्कृति के महान् संरक्षक थे। यहीं अब्दुल मलिक इसामी (मृ. 1399) ने अपने काव्यात्मक इतिहास *फ़ुतुह-अस सलातीन* (सुल्तानों की विजयें) की रचना की थी, जिसे उसने फ़िरदौसी के *शाहनामा* के पैटर्न पर रचा था, और उसने ग़ज़नी के महमूद को आदर्श ईरानी राजा के रूप में दर्शाया है; और बहमनी वंश के संस्थापक शासक अलाउद्दीन बहमन शाह को, भारत में मुस्लिम शासन के संस्थापक से ऐतिहासिक संबंध चिह्नित करने के लिए महमूद के साथ जोड़ा है। इस प्रकार बहमनी की क्षेत्रीय सल्तनत ने फ़ारसीकृत मुस्लिम राजतंत्रों की दुनिया में एक वैध स्थान होने का दावा किया।

इस शताब्दी की एक अन्य विशेषता भारत में फ़ारसी भाषा का बढ़ता देशीकरण है। यह पहलू भारत में फ़ारसी शब्दकोश संबंधी कृतियों के सृजन में, जो बहु-भाषिक हैं तथा इनमें अरबी, तुर्की, सीरियाई, ग्रीक, लातिन, पश्तो तथा *हिंदवी* के शब्द, शब्द-व्युत्पत्ति ग्रंथों या शब्दकोशों की प्रविष्टियों और पर्याय शब्दों और उनकी व्याख्या के लिए प्रयुक्त शब्दों में झलकते हैं। यह शब्दकोश संबंधी ग्रंथ दो प्रकार के हैं – *लुग़ात* तथा *फ़रहंग*। *लुग़ात* सामान्य शब्दकोश हैं जिनमें शब्द तथा एक या कई भाषाओं में उनके समानार्थी दिए होते हैं; जबकि *फ़रहंग* फ़ारसी भाषा के व्याख्यापरक शब्दकोश हैं जिनमें साहित्यिक भाषा के स्रोत-संसाधन तथा ज्ञान व संस्कृति का वर्णन होता है। चौदहवीं तथा पन्द्रहवीं शताब्दी में उत्तर भारत की स्थानीय सल्तनतों के कई क्षेत्रों में ऐसे कई शब्दकोशों को संग्रहित किया गया था। फ़ारसी भाषा तथा इतिहास के विद्वान, स्टीफ़न पेलो का तर्क है कि दिल्ली के परिधीय क्षेत्रों में ऐसे निर्देशात्मक ग्रंथों का सृजन फ़ारसीकृत दुनिया में उनके संरक्षणदाताओं के साहित्यिक रुतबे का संकेत करता था।

इन शब्दकोशों का इस्तेमाल भाषा-शिक्षण में किया जाता था, विशेषकर रूढ़ शब्दों, ऐतिहासिक तथा मिथकीय व्यक्तित्वों के संदर्भ, भौगोलिक स्थान-विशेष, अन्योक्तियों तथा बहु-भाषी शब्दावलियों के माध्यम से काव्य-शिक्षण में। विभिन्न भाषाओं से शब्दों को आत्मसात कर प्रस्तुत करने के इस अर्थ में फ़ारसी भाषा को 'परा-भाषा' (hyper-language) कहा गया है। इसके कुछ उदाहरण हैं: 1419 में क़ाज़ी बदरूद्दीन मुहम्मद देहलवी, जिसे 'धारवाल' कहा जाता था, द्वारा संकलित *अदत अल-फ़ुज़ाला* (विद्वानों की युक्ति)। वह मूल रूप से दिल्ली का निवासी था, जो जौनपुर की ओर प्रवास कर गया था और इसके बाद मध्य प्रदेश के धार में जाकर बस गया था। 1433 में बदरूद्दीन इब्राहिम द्वारा संकलित *फ़रहंग-ए ज़फ़नगुया उ जहानपुया* (भाषा-अलंकार तथा विश्वान्वेषी शब्दकोश) उन पहले शब्दकोशों में था जिसमें बड़ी संख्या में शब्दों (5170 शब्द) को शामिल किया गया था; तथा यह वर्णक्रम के सिद्धांत का उपयोग करने वाला प्रथम, तथा बहुभाषी शब्दों का इस्तेमाल करने वाला प्रारम्भिक फ़ारसी शब्दकोश था। यह विदेशी भाषाओं से फ़ारसी में लिए गए शब्दों का विस्तृत आँकड़ा प्रस्तुत करता है तथा उनके श्रेणीकरण का प्रथम प्रयास भी है। अन्य कृति, 1473 में बंगाल के इलियासशाही वंश के सुल्तान रुकनुद्दीन बरबक शाह के लिए इब्राहिम क़िवामुद्दीन फ़ारूखी द्वारा संकलित *शरफ़नामा-यी मनेरी* है। यह फ़ारसी तथा तुर्की के व्याकरणिक रेखांकन पर जानकारी का विवरण देती है। फ़ारसी व्याकरण पर अन्य पुस्तकों के अभाव में शिक्षण हेतु इस शब्दकोश संबंधी ग्रंथ का उपयोग किया जाता था। शब्दकोश-शास्त्रियों तथा उनके ग्रंथों का परा-क्षेत्रीय प्रवाह तथा संचरण उत्तर भारत में सैन्य, दरबारी, बुद्धिजीवी तथा धार्मिक अभिजात्यों के बीच फ़ारसी शिक्षण की गहन होती प्रवृत्ति का संकेत करता है।

ये शब्दकोश विषयवस्तु या वर्णक्रम के अनुसार व्यवस्थित थे, जिनमें अरबी, तुर्की, हिंदवी, इत्यादि अन्य

भाषाओं से ग्रहण किए गए शब्दों के लिए अलग से खंड होता था। भारत में संकलित सबसे प्रारम्भिक फ़ारसी शब्दकोश *फ़रहंग-ए क़व्वास* था और इसमें *हिंदवी* के केवल आठ शब्द शामिल थे। बाद के शब्दकोशों में *हिंदवी* पर अलग से खंड था, जो लोगों और स्थानों के यथार्थ नामों; नातेदारी के पदों, समय, खगोल-विद्या, चिकित्सा, वनस्पतिशास्त्र तथा कृषि से संबंधित शब्दों; उपकरणों, युद्ध-शास्त्रों, खिलौनों, वस्त्रों तथा संगीत में प्रयुक्त शब्दों की विषयवस्तु के अनुरूप व्यवस्थित थे। फ़ारसी शब्दकोशों में *हिंदवी* के शब्दों की उपस्थिति 'हिंद-फ़ारसी' पदों में सारबद्ध दो संस्कृतियों के बीच संपर्क की विविधतापूर्ण प्रकृति की व्याख्या करती है और यह संकेत करती है कि कैसे फ़ारसी भारत के विभिन्न क्षेत्रों से शब्दावलियों को ग्रहण करने की प्रक्रिया से गुजर रही थी। उदाहरण के लिए, 1378 में रचित, *फ़रहंग-ए लिसान-ए शुआरा* (कवियों की भाषा का शब्दकोश) कई रोज़मर्रा के व्यवहार के शब्दों को स्थान देता है, जैसे *भेली* (*हिंदवी* में 'भूसी') फ़ारसी के *तग़ाज़दाना* के समानार्थी के रूप में; *गुदगुदी* (*हिंदवी* में 'गुदगुदाना') फ़ारसी के *ग़िल्ग़िलिच* की व्याख्या करने हेतु; *धक्का* (*हिंदवी* शब्द) के लिए फ़ारसी *असीब* (झटका; दुर्भाग्य)। ये पहलू उन ऐतिहासिक प्रक्रियाओं की व्याख्या करते हैं, जिन्हें सायमन डिग्बी तथा स्टीफेनो पेलो जैसे विद्वान भारत में 'फ़ारसी का भाषायी देशीकरण' तथा फ़ारसी का क्षेत्रीयकरण कहते हैं, जिसने मुग़लों के अधीन इसके असाधारण विकास का बीजारोपण किया था।

मुग़ल-पूर्व शताब्दियों में (*c.* 1000-1500), राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक कारकों की अत्यधिक विविधता थी जिन्होंने विभिन्न भाषायी वर्गों में, यथा, संस्कृत, अरबी, फ़ारसी, अपभ्रंश तथा क्षेत्रीय भाषा, जिसे *हिंदवी* या *भाखा* (फ़ारसी स्रोतों में उत्तर भारत में बोली जाने वाली भाषा के लिए प्रयुक्त शब्द) कहा जाता था, में व्यापक तथा विविध शैली के ग्रंथों के सृजन को अनुप्रेरित किया। वस्तुतः, संस्कृत भाषा का प्रसार असाधारण था जैसा कि यह दक्षिण एशिया तथा उसके भी पार तक विस्तृत था, जिससे एक सांस्कृतिक परिक्षेत्र, 'संस्कृत सार्वदेशिक परिक्षेत्र' (Sanskrit Cosmopolis), की सृष्टि होती थी[3]। इसके साथ ही, उपमहाद्वीप के विभिन्न क्षेत्रों में बोली जाने वाली भाषाओं या क्षेत्रीय भाषाओं में, लिखित तथा मौखिक रूप में, साहित्यिक रचनाएँ आकार ले रही थीं। क्षेत्रीय साहित्य में वंशावली संबंधी ग्रंथ, जीवनचरित, संरक्षणदाताओं की प्रशस्तियाँ, भक्ति साहित्य तथा उत्तर भारत और दक्खन में स्थित क्षेत्रीय दरबारों के सरकारी दस्तावेज शामिल हैं। अरबी-फ़ारसी, संस्कृत तथा क्षेत्रीय भाषाओं द्वारा अधिग्रहीत सांस्कृतिक अधिक्षेत्र और इनके संवाद-कर्ताओं के सामाजिक संदर्भ एक-दूसरे से पृथक् नहीं थे। वस्तुतः, इनके बोलने वालों के बीच निरंतर एक आदान-प्रदान, संवाद तथा विचारों का प्रवाह बना हुआ था। कुछ बोलने वाले तो एक से अधिक या कई भाषाओं के प्रयोग में दक्ष होते थे।

विभिन्न भाषायी संस्कृतियों के बीच आदान-प्रदान ने साहित्यिक सृजन को बड़े अर्थपूर्ण ढंग से प्रभावित किया। पहला, संस्कृत तथा फ़ारसी की शास्त्रीय विधाओं से ग्रहण करने के फलस्वरूप क्षेत्रीय साहित्य में नई शैलियों का आविर्भाव हुआ[4]। दूसरा, क्षेत्रीय इतिहास तथा प्रशस्तियाँ संस्कृत तथा फ़ारसी में भी लिखी गईं। तीसरा, साहित्यिक सृजन में संस्कृत से फ़ारसी तथा क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद भी शामिल था[5], जिसे सामान्यतः राजनीतिक संरक्षण में लिखवाया जाता था। इस तरह के शुरुआती उदाहरण में ज़ैनुल आबिदीन, (कश्मीर का सुल्तान, r. 1423-74) के द्वारा करवाया गया संस्कृत ग्रंथ *कथासरितसागर* का फ़ारसी अनुवाद है। चौथा, जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, फ़ारसी भारतीय परिवेश में मज़बूती से जम चुकी थी और जो संस्कृत में फ़ारसी के व्याकरणिक लेखनों में सबसे प्रारम्भिक ग्रंथ *यवननाममाला* (1364) से और स्पष्ट होता है जिसे फ़िरोज़ शाह तुग़लक़ के दरबार में कार्यरत जैन विद्वान विद्यानिलय द्वारा लिखा गया था।

---

[3] 'संस्कृत सार्वदेशिक परिक्षेत्र' पदावली को संस्कृतविद् तथा इतिहासकार शेल्डन पोलॉक ने गढ़ा है, चौथी से चौदहवीं शताब्दी के बीच एक सांस्कृतिक परिक्षेत्र के विचार को परिभाषित करने के लिए, जिसमें संस्कृत ग्रंथों से व्युत्पन्न समान ग्रंथ, विचार तथा विषय मौजूद थे और विभिन्न नृजातीय तथा भाषायी जन-समूह इनको साझा करते थे, जो सौंदर्यबोध, राजव्यवस्था, राजत्व के गुणों, अध्ययन तथा सार्वभौमिक अधिराज्य के विषय में सामन विचारों का संचरण करते थे, शस्त्रों की ताकत के बल पर नहीं बल्कि अनुकरण के आधार पर।

[4] क्षेत्रीय स्वरूप में फ़ारसी को ग्रहण करने का एक उदाहरण हिंदवी सूफ़ी प्रेमकाव्य या *प्रेमाख्यान* हैं। इस शैली का सबसे पहला ग्रंथ 1379 में मुल्ला दाऊद द्वारा रचित *चंदायन* है। *प्रेमाख्यान* का काव्य रूप फ़ारसी गीति काव्य *मसनवी* से निकला है, जबकि इनकी कथा के पात्र स्थानीय परिवेश में आधारित हैं और क्षेत्रीय बोली अवधी बोलते हैं।

[5] मिसाल के लिए, विष्णुदास द्वारा वाल्मीकि की *रामायण* का क्षेत्रीय भाषा बंगाली में रूपांतरण।

साहित्यिक इतिहासकारों द्वारा तैमूर के आक्रमण के बाद के काल को भारत में फ़ारसी साहित्यिक संस्कृति के लिए अवमंदन के काल के रूप में देखा गया है। इन विद्वानों ने यह भी स्पष्ट किया है कि पन्द्रहवीं शताब्दी के दौरान फ़ारसी साहित्यिकारों तथा साहित्य का शिथिल पड़ता भाग्य मुग़लों के नए शासक-वंश द्वारा प्रदत्त असाधारण संरक्षण के अधीन एक बार फिर चमक उठा था, जो सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उत्तर भारत में स्थापित हो चुके थे। लेकिन, क्षेत्रीय तथा प्रांतीय राज्यों में फ़ारसी अदब तथा इतिहास लेखन का ऊपर किया गया सर्वेक्षण, फ़ारसी का एक अलग ही दृश्य पेश करता है जैसा कि यह उत्तर भारत तथा दक्खन के बहु-भाषी और बहु-सांस्कृतिक संसार में जड़ें जमा रही थी, तथा मुग़लों के अधीन प्रधान स्थिति प्राप्त करने का आधार बन गई थी।

बोध प्रश्न-1

1) भारत में मुग़ल आक्रमण की पूर्व-संध्या पर फ़ारसी भाषा तथा साहित्य की संवृद्धि की चर्चा कीजिए।

....

....

....

2) दिल्ली के परिधीय क्षेत्रों में किन निर्देशात्मक ग्रंथों की रचना की गई तथा उनका सृजन क्या संकेत करता है?

....

....

....

3) रिक्त स्थान भरिए:

i) मुग़लों की मातृभाषा .... थी।

ii) मुग़लों के अंतर्गत लिपिकों को .... नाम से जाना जाता था।

iii) मुग़ल सचिवालय जहाँ दस्तावेज़ों को सुरक्षित तथा संकलित किया जाता था, ... कहलाता था।

iv) ....सोलहवीं शताब्दी में विकसित होने वाली एक विशिष्ट हिंद-फ़ारसी साहित्यिक शैली थी।

1.3 फ़ारसी भाषा में इतिहास लेखनः स्वरूप, पद्धति, तथा उद्देश्य

मुगलकाल के दौरान ज़ैनखान की *तुज़ुक-ए बाबरी* और ख्वांदमीर की *क़ानून-ए हुमायूँनी* से लेकर मुन्ना लाल की *तारीख-ए शाह आलम* तक इतिवृत्तकारों द्वारा भारी मात्रा में वृत्तांतों की रचना की गई। हालांकि, हम यहाँ केवल कुछ ही प्रमुख राजनैतिक रचनाओं तथा इतिहासकारों की चर्चा करेंगे। साथ ही अबुल फज़ल अल्लामी पर विशेष व्याख्या की जायेगी।

अकबर के काल में ऐतिहासिक साहित्य का अद्भुत रूप से बड़े पैमाने पर सृजन किया गया था। अकबर ने इस्लामिक सहस्राब्दी के स्मरणोत्सव के लिए *तारीख-ए अल्फी* के लेखन को अधिकृत किया। इसमें 632 से लेकर अकबर के शासनकाल तक की अवधि के इतिहास को समाविष्ट किया गया है। यह पुस्तक 1582 में अधिकृत हुई और 1592 में पूरी हुई। ख्वाजा निज़ामुद्दीन अहमद ने *तबकात-ए अकबरी* की रचना की। इसका कालक्रम 1592-93 की तिथि प्रदान करता है लेकिन इसमें घटनाओं का वर्णन 1593-94 तक मिलता है। अक्टूबर 1594 में लेखक की मृत्यु हो जाती है। निज़ामुद्दीन ने अपनी *तबकात* को नौ क्षेत्रों में विभाजित किया है, प्रत्येक का वर्णन एक अलग *तबका* (भाग) में किया गया हैः दिल्ली, गुजरात, बंगाल, मालवा, जौनपुर, सिंध, कश्मीर और मुल्तान। लेखक अकबर के साम्राज्य के शहरों और *कस्बों* के बारे में रोचक जानकारी प्रदान करता है। वह उल्लेख करता है कि अकबर के साम्राज्य में 3200 *कस्बे* और 120 *शहर* शामिल थे। उसका इरादा इनमें से

प्रत्येक पर अलग से लिखने का था लेकिन वह इस कार्य को पूरा नहीं कर सका। बदायुनी ने अकबर के शासनकाल में 'विधर्मिता' और 'नवाचारों' के खिलाफ *मुन्तखब-उत तवारीख* की रचना की। उन्होंने तथाकथित रूप से घटनाओं की 'सच्ची' तस्वीर प्रस्तुत करने के लिए पुस्तक को गुप्त रूप में लिखा। पुस्तक तीन खंडों में लिखी गई है। पहला खंड सुबुक्तिगीन के समय से हुमायूँ तक और दूसरा अकबर के शासनकाल से सम्बन्धित है। वह अकबर के शासनकाल में 'इस्लाम के महत्व के ह्रास' पर शोक प्रकट करता है। तीसरा खंड *तज़किरा* के रूप में है जो अकबर के काल के *मशायखों, उलमा*, कवियों और चिकित्सकों की जीवनियों संबंधी वृत्तांत उपलब्ध कराता है। बदायुनी *इबादत खाना* की बैठकों की प्रत्यक्षदर्शी के रूप में जानकारी उपलब्ध करता है। बदायुनी अकबर के *महज़र* के पूरे ड्राफ्ट का वर्णन करता है, जो अन्यथा अबुल फज़ल की कृति में अनुपलब्ध है। मुहम्मद आरिफ़ कंधारी की *तारीख-ए अकबरशाही* मुग़लों के प्रशासनिक ढाँचे और टोडरमल के भू-राजस्व सुधारों को समझने के लिए मूल्यवान है तथा अकबर के काल में किसानों की स्थिति और उनके मुद्दों पर प्रकाश डालती है।

1.3.1 इतिहास के रूप में संस्मरण तथा अन्य जीवनीपरक लेखन

ऐतिहासिक विवरण या जीवनी जिसे मुख्यतः व्यक्तिगत स्मृतियों के आधार पर लिखा गया हो, संस्मरण की श्रेणी में आते हैं। मुगल काल के दौरान दो प्रमुख ऐसे विवरण हैं जो इस श्रेणी में आते हैंः बाबर का संस्मरण *बाबरनामा* तथा गुलबदन बेगम का *हुमायूँनामा/अहवाल-ए हुमायूँ पादशाह*।

बाबर का संस्मरण (*तुज़ुक-ए बाबरी/बाबरनामा*), मूलरूप से चग़ताई तुर्की में लिखित, को वास्तव में 'इस्लामी साहित्य में एकमात्र वास्तविक आत्मकथा' कहा जा सकता है। यह घटनाओं का अत्यंत स्पष्ट और सार्वलौकिक वृत्तांत है। उसने अपने काल का पूर्ण रूप से सत्य और निष्पक्ष विवरण प्रस्तुत किया है। बाबर कहता है कि, 'उसने जो भी कहा है वह सर्वथा सत्य है... घटनाओं का उल्लेख वैसे ही किया है जैसे वे हुई थीं। सभी कुछ जो मैंने लिखा है ... प्रत्येक शब्द में निष्ठापूर्वक सत्य का अनुसरण किया है'। बाबर की मृत्यु 1530 में हुई थी, किंतु उसका विवरण अचानक से 7 सितंबर 1529 पर रुक जाता है। इसे घटनाओं की एक डायरी के रूप में लिखा गया है। बाबर फ़रग़ाना और समरकंद में अपने संघर्ष के जीवंत विवरण के साथ-साथ अपनी हिंदुस्तान की यात्रा, भारत में उसके संघर्षों और विजयों का विस्तृत विवरण उपलब्ध कराता है। वह उस क्षेत्र की राजनीतिक, सैन्य तथा सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों का विवरण प्रदान करता है जहाँ उसने अपनी गद्दीनशीनी (1494) के बाद से शासन किया था। बाबर इन शब्दों में भारतीयों की कमजोरी को दर्ज करता हैः 'उस समय सारा हिंदुस्तान किसी एक सुल्तान के अधीन नहीं था, प्रत्येक राजा अपने छोटे से इलाके में स्वयं को अपने दम पर सुल्तान बनाने को आतुर था'। वह भारतीय शहरों और गांवों की क्षणभंगुर प्रकृति को भी दर्ज करता है। वह टिप्पणी करता है, 'हिंदुस्तान में किसी गाँव या बस्ती का विनाश और निर्माण, यहाँ तक कि शहरों का भी, एक झटके में हो जाता है। ऐसे बड़े शहर जिनमें लोग कई सालों से रह रहे होते हैं, अगर वे उसका परित्याग करते हैं तो वे उसे एक ही दिन में ऐसे खाली कर देते हैं कि उसका कोई निशान या चिह्न भी नहीं बचता। अगर उनके मन में किसी शहर के निर्माण का ख्याल आता है तो किसी सिंचाई की नहर खोदने या बांध बनाने की जरूरत भी नहीं पड़ती ... वे सरल रूप से पर्याप्त पराली और अनेक पेड़ों की टहनियों की मदद से झोपड़ी खड़ी कर लेते हैं और तुरंत एक नगर या ग्राम का जन्म हो जाता है'। लेकिन, बाबर असंख्य शिल्पकारों की मौजूदगी से प्रभावित था। वह लिखता है कि, 'प्रत्येक पेशे तथा व्यापार में लगे हुए कामगारों की संख्या असंख्य है'। वह इन पेशों की वंशानुगत प्रकृति पर भी टिप्पणी करता हैः 'कई युगों से समान पेशा और व्यापार पिता से पुत्र को उत्तराधिकार के रूप में मिलता रहा है'। उसका संस्मरण बाबर को एक सच्चे प्रकृतिवादी के रूप में इंगित करता है। उसका स्थानीय पर्यावरण तथा भौतिक भूगोल – वनस्पति, जीव-जंतु, नदी-तंत्रों तथा प्राणी जगत में उसकी गहन रुचि असाधारण थी। विभिन्न क्षेत्रों में सिंचाई हेतु पानी खींचने के लिए प्रयुक्त विभिन्न प्रकार के उपकरणों, विशेषकर फ़ारसी शहर (Persian wheel) और चरस का विस्तृत विवरण तथा अवलोकन आश्चर्यजनक है। लेकिन बाबर हिंदुस्तान को अपनी मातृ-भूमि के रूप में स्वीकार नहीं कर पाया। उसे हमेशा समरकंद के 'उद्यान वाले महल' और अपनी मातृ-भूमि के खरबूजे की याद सताती रही। वह टिप्पणी करता हैः 'कई लोग आम की बड़ी तारीफें करते हैं, कि वे इसे हर प्रकार के फल की तुलना में प्राथमिकता देते है, खरबूजे को छोड़कर, लेकिन मुझे उनकी ये तारीफें उचित प्रतीत नहीं होती हैं'।

गुलबदन बेगम बाबर और दिलदार बानो बेगम की पुत्री थीं। गुलबदन बेगम का विवरण अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि उनका अवलोकन राजप्रासाद के एक अंतरंग व्यक्ति की अभिव्यक्ति थी और वे हिंदुस्तान में मुगल संप्रभुता की स्थापना के आरंभिक निर्माणकाल की प्रत्यक्ष गवाह थीं। वह जब मात्र 8 वर्ष की थीं, तब बाबर की मृत्यु हो गई। वह हुमायूँ के उतार-चढ़ाव के चरण की साक्षी रही थीं। उन्होंने अबुल फ़ज़ल के *अकबरनामा* हेतु इस काल के इतिहास को सुसाध्य बनाने के लिए अपने संस्मरण को कलमबद्ध किया था। *हुमायूँनामा* जन्म, मृत्यु, तथा अन्य संबंधित समारोहों के संबंध में अंतर्दृष्टि से परिपूर्ण है। यह शासक की औपचारिक दरबार से इतर एक मानव के रूप में गतिविधियों का वर्णन करता है। उनका संस्मरण मुख्यतः सुनी हुई तथा याद रह गई स्मृतियों पर आधारित है। तथापि, यह हरम के अंतर-वासियों का प्रत्यक्ष विवरण उपलब्ध कराता है। *हुमायूँनामा* बाबर तथा हुमायूँ पर प्रकाश डालता है और मुग़ल हरम के जीवन पर/शाही ख़ानदान के निजी/सामाजिक संबंधों, आंतरिक तनाव, *अदब* (नियम/*तहज़ीब*/शाही परंपराएँ/आचरण) की भूमिका पर अंतर्दृष्टि डालता हैं। उनका विवरण यह संकेत करता है कि शाही ख़ानदान की महिलाएँ विवाह तथा सामाजिक आचारों के मामले में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थीं। इससे यह भी पता चलता है कि महिलाएँ अक्सर राजनीतिक मध्यस्थ की भूमिका भी निभाती थीं। प्रारम्भिक काल में मुग़ल *हरम* में पर्दे की स्थिति पर भी इससे प्रकाश पड़ता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इसका प्रचलन तुलनात्मक रूप से कम कठोर था। इससे यह भी ज्ञात होता है कि *हरम* की प्रधान मुख्य रानी नहीं होती थी, बल्कि राजमाता होती थी जो अक्सर बादशाह के सलाहकार के रूप में कार्य करती थीं। दिलदार बानू बेगम से हुमायूँ की नियमित भेंट इस बात की पुष्टि करती है। वस्तुतः, गुलबदन बेगम का *हुमायूँनामा* इस काल के 'जीवंत अनुभवों और सामाजिक-राजनीतिक यथार्थ' का चित्रण है। गुलबदन का विवरण न केवल मुग़ल घराने के घरेलू जीवन पर प्रकाश डालता है, बल्कि सार्वजनिक/निजी क्षेत्रों के दायरों तथा लैंगिक संबंध बनाम राजनीतिक सत्ता की सीमाओं के बारे में भी संकेत करता है।

1.3.2 सार्वभौमिक तथा वंशगत इतिहासः अबुल फ़ज़ल

अबुल फ़ज़ल, फ़ैज़ी का छोटा भाई और महान् विद्वान शेख़ मुबारक नागौरी का पुत्र, न केवल साम्राज्य का 'सचिव' था बल्कि अकबर का घनिष्ठ मित्र भी था, जो एक तर्कवादी और उदार विचारक था। वह *इबादत ख़ाना* की स्थापना से एक वर्ष पूर्व 1574 में अकबर के दरबार में शामिल हुआ। उसकी मुख्य ख्याति उसकी चिरस्मरणीय कृति *अकबरनामा* पर आधारित है। *आईन-ए अकबरी*, एक अन्य मौलिक रचना, जो अकबर के साम्राज्य का सांख्यिकीय ब्यौरा प्रस्तुत करती है, प्रारंभ में *अकबरनामा* का तीसरा खंड था। *अकबरनामा* का वर्णन अकबर के 46वें शासकीय वर्ष पर समाप्त होता है; अकबर के 47वें शासकीय वर्ष में बीर सिंह बुंदेला द्वारा उसकी हत्या करवा दी गई थी। *आईन* की रचना 42वें शासकीय वर्ष में पूर्ण हुई थी और 43वें शासकीय वर्ष में इसमें बरार का खंड जोड़ा गया। बाद में, मुहिब अली ख़ान *अकबरनामा* के विवरण को अकबर के शासनकाल के अंत तक लाता है। लेकिन, जोड़ा गया हिस्सा सम्भवतः शाहजहाँ के काल में लिखा गया था और ऐसा प्रतीत होता है कि इसे मौतमद ख़ान के विवरण से बड़े पैमाने पर नकल किया गया था। अकबर के शासनकाल से यह वृत्तांत एक वार्षिक वृत्तांत बन जाता है। *आईन* पाँच भागों में विभाजित है। पहले संबंध साम्राज्यीय प्रतिष्ठानों से संबंधित है; दूसरा सेना की चर्चा करता है; तीसरा विभिन्न कार्यालयों/कर्तव्यों, राजस्व की दरों के वर्णन तथा *सूबा*-वार सांख्यिकीय आँकड़ों को स्पष्ट करता है; चौथा मुख्यतः हिन्दू दर्शन, धर्म, चिकित्सा विज्ञान, प्रथाओं तथा रीति-रिवाज़ों का वर्णन करता है; जबकि पाँचवें भाग में अकबर की उक्तियों को शामिल किया गया है। जहाँ *अकबरनामा* घटनाओं तथा लड़ाइयों से परिपूर्ण है, वहीं *आईन* को एक गज़ेटियर के रूप में लिखा गया है।

हालांकि अबुल फ़ज़ल की इतिहास लेखन की शैली फ़ारसी इतिहासलेखन परंपरा के अंतर्गत ही आती है, परन्तु उसने अरबी परंपरा को शामिल करने का प्रयास भी किया है। फिर भी, जैसा कि निज़ामी का मानना हैं, 'आमजन' को स्थान देने का उसका मंतव्य 'सीमित' तथा 'आंशिक' थाः 'इतिहासकार के अध्ययन के मनोहारी दायरे में आमजन को अधिकारतः जगह नहीं दी गई थी, जैसा कि अरब इतिहासकारों ने किया था, बल्कि एक आवश्यकता के रूप में दी गई थी, क्योंकि उनके बिना अकबर की बहुरंगी गतिविधियाँ अपूर्ण और नीरस ही नज़र आती' (निज़ामी 1982ः 153)। तथापि, अबुल फ़ज़ल ने अकबर के काल के राजनीतिक और प्रशासनिक यथार्थ को सामने लाने के लिए नई पद्धतियों का इस्तेमाल किया। उसकी *आईन* अकबर के साम्राज्य की महानता का व्यापक विवरण पेश करती

है। प्रशासनिक नियमों और साम्राज्य और प्रांतों की भौगोलिक संरचनाओं के संबंध में उसके द्वारा दिया गया विस्तृत विवरण इतिहास लेखन के क्षेत्र को विस्तृत और समृद्ध बनाता है। अबुल फ़ज़ल ने राजशाही की 'ईश्वर से उद्भूत प्रकाश' (*फ़र्र-ए ईज़दी*) के रूप में व्याख्या की है और कहा है कि संप्रभु शासक को 'न्यायसंगत' शासक होना चाहिए तथा उसे जनता के कल्याण के लिए काम करना चाहिए। उसके लिए अकबर एक आदर्श सम्राट था जो आध्यात्मिक तथा लौकिक दोनों क्षेत्रों में नेतृत्व प्रदान करता था। *महज़र* की घोषणा से अकबर ने *मुज़तहिद* 'आदर्श पुरुष' और *इमाम-ए आदिल* 'एक अपरिहार्य नेता' का स्तर पा लिया था। उसने अकबर के शासन को शांति, समृद्धि, स्थायित्व, सुशासन तथा धार्मिक सहिष्णुता और स्वतंत्रता के काल के रूप में प्रस्तुत किया है।

लेकिन, अबुल फ़ज़ल के लेखन की सीमा अकबर को एक 'आदर्श' बादशाह तथा 'आदर्श पुरुष' के रूप में चित्रित करने के उत्साह में ही निहित है, अकबर की उपलब्धियों का महिमामंडन करने के लिए वह अक्सर उसकी कमज़ोरियों को नज़रंदाज़ कर देता है और तथ्यों को पेश करने में अपनी 'तर्कशक्ति' का प्रयोग करने में असफल रहता है और इस तरह कई बार उसका विवरण 'पक्षपातपूर्ण' हो जाता है। अकबर की असफलताओं को छुपाने के लिए उसके कई प्रयोग अबुल फ़ज़ल के श्रमसाध्य ढंग से रचे गए *अकबरनामा* में स्थान नहीं पाते हैं: साम्राज्य की सम्पूर्ण भूमि को *ख़ालिसा* में बदलने के प्रयोग की विफलता का कोई भी उल्लेख हम नहीं पाते हैं, न ही वह यह बताता है कि अकबर ने अपने 24वें शासकीय वर्ष में फिर से *जागीर* अनुदान प्रदान करना शुरू कर दिया था। इस प्रकार अबुल फ़ज़ल ने उन कई तथ्यों को अनदेखा कर दिया जो अकबर को एक 'आदर्श' सम्राट के रूप में पेश करने की उसकी योजना के अनुरूप नहीं थे या जो अकबर की प्रतिष्ठा में कमी लाते थे। इस प्रकार *अकबरनामा* अधिकांशतः 'अकबर की कहानी' ही है।

1.3.3 काव्य रचनाएँ

अकबर का दरबार अनेक विद्वान-कवियों से सुशोभित था। अकबर संभवतः मुस्लिम शासकों में प्रथम था जिसने अपने दरबार में *मलिक-उस शुआरा* (उत्कृष्टतम कवि) की उपाधि का आगाज किया। अबुल फैज़ 'फैज़ी' (1547-1595) अकबर द्वारा इस उपाधि से अलंकृत प्रथम कवि थे। अकबर के दरबार में ईरानी कवियों के 59 श्रेष्ठतम फारसी कवियों में से केवल नौ गैर-ईरानी थे। ईरानी कवियों को समान रूप से मुगल कुलीन दरबारों में प्रमुखता प्राप्त थी और उन्हें मुगल कुलीनों का उदार संरक्षण प्राप्त था। निज़ाम अल-दीन बख्शी ने 81 ऐसे ईरानी कवियों का उल्लेख किया है (बदायुनी ने इसकी संख्या 168 दर्ज की है) जिन्हें मुगल कुलीनों का संरक्षणत्व प्राप्त था। यह वर्णन प्राप्त होता है कि 100 से अधिक कवि और 31 लब्ध प्रतिष्ठित विद्वानों को अकेले अब्दुल रहीम खान-ए खानान के दरबार में संरक्षणत्व प्राप्त था। अकबर के शासनकाल में इन लब्ध प्रतिष्ठित कवियों द्वारा विभिन्न काव्य रूपों का विकास हुआ और उन्होंने उन काव्य रूपों – *दीवान*, *गज़ल*, *मसनवी*, आदि – को समृद्धि प्रदान की। जहाँ फैज़ी भारतीय मूल का था (उसके पिता शेख मुबारक नागौर जाकर बस गए थे और उसका जन्म आगरा में हुआ था), वहीं ख्वाजा सैय्यद जमालुद्दीन 'उरफी' (शिराज़ से), नज़ीरी (निशापुर से), और ख्वाजा सैन सनाई (मशहद से), जो अकबर के दरबार के अन्य लब्ध प्रतिष्ठित कवि थे, मुख्यतः ईरानी मूल के थे। नज़ीरी बाद में अब्दुल रहीम खान-ए खानान के दरबार में शामिल हो गया। उन्होंने *दीवान* और *मसनवियों* की भी रचना की। बदायुनी, उरफी और हुसैन सनाई के लेखन की भूरि-भूरि प्रशंसा करता है। वह टिप्पणी करता है कि, 'ऐसी कोई गली या बाज़ार नहीं है जहाँ पुस्तक विक्रेता इन दो कवियों के *दीवानों* की प्रतियाँ बेचने के लिए सड़क के किनारे न खड़े हों'।

अबुल फज़ल के बड़े भाई और शेख मुबारक के बेटे फैज़ी अपनी धार्मिक विश्व-दृष्टि में उदार और सहिष्णु थे। बदायुनी फैज़ी के काव्य-कौशल की अत्यन्त प्रशंसा करता है। फैज़ी ने पाँच *मसनवियों* (शायद निज़ामी के *खमसा* के पैटर्न पर) की रचना करने की योजना बनाई थी, लेकिन वह केवल दो, *नल-दमन* और *मरकज-ए अदवार* को ही पूरा कर सका; अन्य तीन *सुलेमान वा बिलकिस*, *हफ्त किश्वर*, तथा *अकबरनामा* (काव्य रुप में) कभी भी पूरे नहीं हो सके। उनकी श्रेष्ठतम काव्य रचनाओं में उनकी कृति *नल-दमन* है। उन्होंने *मसनवी* शैली में नल-दमयंती के कथानक को कुशलता से बुना, जिसने मध्य युगीन साहित्यकारों के मध्य सर्वाधिक लोकप्रिय पठन का स्थान हासिल किया। अकबर ने फैज़ी को अपनी काव्य रचनाओं के माध्यम से 'भारतीयता की महक' को 'फारसी भाषी दुनिया' में समाविष्ट करने के लिए प्रेरित किया।

अतः मुजफ़्र आलम तथा संजय सुब्रहमण्यम का तर्क है कि फैज़ी की *नल-दमन* ने 'अकबर के राजनीतिक आदर्शों के निर्माण और उनका प्रतिनिधित्व करने, दोनों में एक भूमिका निभाई'। उनका मानना है (2011: 248) कि कथानक के माध्यम से फैज़ी 'शाही सत्ता, प्रेम की प्रकृति और राज्य-प्रबंधन में बुद्धि तथा तर्क के स्थान के बारे में अपने स्वयं के प्रतिबिंबों और तर्कों की एक श्रृंखला का ताना-बाना बुन सका ... फैज़ी की दृष्टि में राजस्व की समस्याएँ सार्वभौमिक हैं और इसका इस तथ्य से कोई सरोकार नहीं है कि राजा मुस्लिम है या नहीं। शाही ज्ञानी-ऋषि द्वारा दिया गया परामर्श एक सूफी संत द्वारा मुगल शासक को दी गई हिदायत/सलाह हो सकती है; और शासितों के साथ सामाजिक संतुलन और सहानुभूति दोनों ही बनाए रखना सार्वभौमिक समस्याएँ हैं, जो सार्वभौमिक समाधान की माँग करती हैं ...'।

बोध प्रश्न-2

1) मुग़ल काल के कुछ संस्मरणों का उल्लेख कीजिए। किस तरह गुलबदन बेगम का *हुमायूँनामा* इस काल के सामाजिक इतिहास की रचना हेतु महत्वपूर्ण है?

....

....

....

2) *बाबरनामा* पर तीन पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

....

3) प्रारम्भिक मुग़ल काल के राजनीतिक इतिहासकारों के नाम बताइए।

....

....

....

4) इतिहास के स्रोत के रूप में *अकबरनामा* का महत्व बताइए।

....

....

....

5) क्या आप इस विचार से सहमत है कि फैज़ी की काव्यात्मक संरचनाओं ने अकबर के राजनीतिक आदर्शों का प्रतिनिधित्व तथा निर्माण करने में भूमिका निभाई?

....

....

....

1.4 *इंशा-नवीसी* या प्रारूप-लेखन की कला

इंशा का शाब्दिक अर्थ है 'सृजन'। लेकिन, मध्यकाल में इससे तात्पर्य दस्तावेज़ों के नमूने, प्रारूप लेखन, निजी पत्र तथा राज्य के पत्र-व्यवहार से था। ये मध्यकाल में प्रशासन के संचालन के साथ-साथ प्रचलित सामाजिक-सांस्कृतिक स्थितियों और विचारों के विषय में प्राथमिक जानकारी उपलब्ध कराते हैं। *इंशा* लेखन मुख्यतः दीवानी के संदर्भ में लिखे जाते थे। *इंशा* साहित्य प्रत्यक्षतः दिल्ली के सुल्तानों और बाद में मुग़लों के कार्यालयीय पद्धतियों (chancellery practices) से संबंधित था।

इस प्रकार दो प्रकार के *इंशा* लेखन थे, एक प्रारूप-लेखन शैली से संबंधित लेखन, अतः ये अनिवार्यतः वास्तविक नहीं हो सकते हैं, और इन्हें प्रारूप-लेखन की कला के आवश्यक कौशल को सिखाने के लिए नमूनों के रूप में लिखा गया होगा। ख्वाज़ा जहाँ महमूद गावाँ की *मनाज़िर-उल इंशा* इस प्रकार की *इंशा* का एक उदाहरण है। अन्य प्रकारों में वास्तविक दस्तावेज़/पत्र/पत्राचार संरक्षित है। ये दूसरे प्रकार के *इंशा* विशिष्ट ऐतिहासिक महत्व के हैं।

मुग़ल काल के *इंशा* संग्रह बड़ी संख्या में मौजूद हैं, हाकिम यूसुफ़ी के *बदाई-उल इंशा* (1533) से शुरू कर मलिकज़ादा के *निगारनामा-ए मुंशी* (1683) तक। सभी *इंशा* संग्रहों में अबुल फ़ज़ल का नाम सर्वोपरि है – *मुकातबात-ए अल्लामी* (उसके भतीजे अब्दुस समद द्वारा संकलित) और *रुक़्क़ात-ए अबुल फ़ज़ल* (उसके अन्य भतीजे नूरुद्दीन मुहम्मद द्वारा संकलित)। नूरुद्दीन मुहम्मद ने अबुल फ़ज़ल के भाई फ़ैज़ी का एक *इंशा* संग्रह, *लतीफ़ा-ए फ़ैज़ी/इंशा-ए फ़ैज़ी* को भी संकलित किया था।

अबुल फ़ज़ल की *मुकातबात-ए अल्लामी* और *रुक़्क़ात-ए अबुल फ़ज़ल,* अकबर, शाही ख़ानदान के सदस्यों (मुग़ल शहज़ादों, रानियों तथा *हरम* के अन्य महत्वपूर्ण लोगों) तथा मुग़ल *उमरा* को लिखे गए पत्रों का संकलन है। इन पत्रों को तीन श्रेणियों में बाँटा जा सकता हैः i) बादशाह (अकबर) की ओर से अधिकारियों तथा अन्य विदेशी प्रतिष्ठित जनों को भेजे गए पत्र, *फ़रमान* और अन्य प्रेषित सरकारी दस्तावेज़ (मिर्ज़ा अज़ीज़ कोका, ईरान के शाह अब्बास, अब्दुल्ला ख़ान उज़बेक़ को सम्बोधित अकबर के *फ़रमान*, मक्का के सम्मानित नागरिकों को भेजे गए अकबर के पत्र तथा पश्चिम के विद्वान-जनों को लिखे गए अकबर के पत्र, इत्यादि); ii) राज्य की नीतियों पर अबुल फ़ज़ल द्वारा अकबर को प्रस्तुत याचिकाएँ तथा प्रतिवेदन और अबुल फ़ज़ल के सहकर्मियों द्वारा उसे लिखे गए पत्र; iii) सामान्य तथा विविध प्रकृति के पत्र। अबुल फ़ज़ल के पत्र उस काल के राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक माहौल को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। यह अकबर के धार्मिक दृष्टिकोण की व्यापक समझ भी उपलब्ध कराते हैं। यह ईरान के शाह, तुर्कों तथा उज़बेक़ों के साथ अकबर की पश्चिमोत्तर सीमांत नीति के परिप्रेक्ष्य में मुग़लों के सम्बन्धों को समझने में भी सहायता प्रदान करते हैं।

अबुल फ़ज़ल के बड़े भाई फ़ैज़ी, जो एक उत्कृष्ट विद्वान था, ने 21 साल की उम्र में अकबर के दरबार में प्रवेश पाया और उसे अकबर के दरबार में *मलिक अल-शुआरा* की उपाधि से नवाज़ा गया। फ़ैज़ी की *इंशा-ए फ़ैज़ी* अत्यधिक जानकारी से परिपूर्ण *इंशा* संग्रह है, ख़ासकर, उसके द्वारा अकबर को लिखी गई पाँच ***अर्ज़दाश्त***। इस तरह की एक *अर्ज़दाश्त* फ़ैज़ी द्वारा अकबर को 1591 में लिखी गई थी, जब वह बुरहानपुर में नियुक्त था। यह न केवल खानदेश के फ़ारूक़ी शासक राज़ी अली ख़ान के साथ अकबर के सम्बन्धों पर रोशनी डालती है बल्कि वह सल्तनत काल से चली आ रही *सरपरदा* (सुल्तान की अनुपस्थिति में एक शाही अहाते का निर्माण जहाँ *सरपरदा* में एक प्रतीकात्मक तख़्त के आगे सभी शाही आदेशों को पेश किया जाता था और प्रतिष्ठित जनों का स्वागत किया जाता था, जो बादशाह की अनुपस्थिति में भी उसके सम्मान तथा गौरव को सुनिश्चित रखे जाने का संकेत होता था) रीति के प्रचलन में रहने का विस्तृत ब्योरा भी प्रदान करता है। फ़ैज़ी ने लाहौर से बुरहानपुर के मार्ग में पड़ने वाले नगरों का भी विस्तृत ब्योरा प्रस्तुत किया है। वह बुराहनपुर के क्षेत्र में उत्तम गुणवत्ता के पपीते और अंजीर उत्पादन का भी सचित्र वर्णन करता है। दिलचस्प है कि फ़ैज़ी अकबर को *ज़िल अल-अल्लाह* (ईश्वर की छाया) कहता है न कि *फ़र्र-ए ईज़दी* (ईश्वर से उद्भूत प्रकाश)। इसके अतिरिक्त, जब फ़ारूक़ी शासक ने *सिजदा* (झुककर प्रणाम करने) करने की अनुमति माँगी तो फ़ैज़ी ने अकबर के धार्मिक विचारों के अनुरूप, विनम्रता-पूर्वक इंकार कर दिया और कहा कि *सिजदा* केवल ईश्वर के सम्मुख ही किया जाना चाहिए। वह लुधियाना के फ़ौजदार के अत्यचारों का उल्लेख भी करता है; वहीं सरहिंद, थानेसर तथा पानीपत के *फ़ौजदारों* और *करोड़ियों* की तारीफ़ करता है। वह दिल्ली के आस-पास की डकैतियों में गुज्जरों के शामिल होने का उल्लेख भी करता है। इस प्रकार, फ़ैज़ी का *इंशा*-संग्रह तत्कालीन राजव्यवस्था, समाज और संस्कृति को समझने के लिए जानकारी का एक मूल्यवान स्रोत है।

इंशा संकलनों में मीर अबुल क़ासिम नमकीन की *मुंशात-ए नमकीन* (1598) इस काल के सामाजिक-आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिवेश को समझने के लिए महत्वपूर्ण है। अबुल क़ासिम ने अकबर तथा जहाँगीर दोनों को सेवा प्रदान की थी। लेकिन, उसका *इंशा* संग्रह जहाँगीर के काल से संबंधित कोई पत्राचार उपलब्ध नहीं कराता है। वह 1567 के आस-पास अकबर की सेवा में शामिल हुआ था और कोह-ए जूद, सिंध, पंजाब तथा गुजरात के इलाकों में नियुक्त था और उसे भक्कर की *जागीर* प्राप्त थी। *मुंशात* आज की तारीख़ में उपलब्ध सबसे लम्बे *इंशा* संग्रहों में से एक है। इसका *ख़ातिमा* (अंतिम भाग) वाला हिस्सा सर्वाधिक ऐतिहासिक महत्व का है। इसमें मुग़ल साम्राज्य के कुलीनों को जारी *मंशूर*, याचिकाएँ, *फ़तहनामा* (विजय-पत्र), विभिन्न नियुक्तियों, यथा *वकील*, *वज़ीर*, *बख़्शी*, ***मीर अद्ल***, ***मीर बहर***, ***मीमार*** (इमारतों के निर्माण हेतु ज़िम्मेदार), से संबंधित प्रशासनिक आदेश शामिल हैं। कुछ दस्तावेज धार्मिक पदाधिकारियों जैसे *शेख़ी*, *सज्जादानशीनी* और *तौलियत* (न्यासधारी) की नियुक्तियों

से संबंधित हैं। *मुंशात* में शाह तहमस्प द्वारा अकबर और हमीदा बानो बेगम को लिखे गए तथा अकबर द्वारा शाह तहमस्प को लिखे गए पत्र तथा अब्दुल्लाह खान उज़्बेक़ द्वारा अकबर को लिखा गया पत्र शामिल है। *मुंशात* इस नज़रिए से भी महत्वपूर्ण है कि इसमें अकबर के प्रारम्भिक काल से संबंधित ऐसी कई सूचनाएँ तथा पत्र-व्यवहार शामिल हैं जो अन्यथा किसी अन्य स्रोत में इतने विस्तृत रूप से उपलब्ध नहीं हैं। इनमें से 1557 में सिकंदर सूर के विरुद्ध मुग़ल विजय के दौरान मानकोट के समर्पण के मौक़े पर जारी दो *फ़रमान* काफ़ी महत्व के हैं। इसी प्रकार, इसमें बैरम ख़ान के विद्रोह के समय, 1560 में, जारी अकबर का *फ़रमान* भी शामिल है। वहीं अकबर द्वारा चित्तौड़ विजय (1568) के उपलक्ष्य में जारी अत्यधिक महत्वपूर्ण *फ़तहनामा* का पूर्ण पाठ भी शामिल है। यह प्रशासनिक विभाजन, अकबर की *दहसाला* व्यवस्था, *बटाई*, *इज़ारा*, इत्यादि के विषय में भी महत्वपूर्ण जानकारियाँ उपलब्ध कराता है। शेख़ बहाउद्दीन ज़करिया मुल्तानी की *दरग़ाह* में शेख़ कबीर की *सज्जादानशीं* के रूप में नियुक्ति का *मंशूर* भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह धार्मिक महत्व की संस्थाओं में गहरे शाही दख़ल की मौजूदगी पर रोशनी डालता है। *मुंशात* में उल्लिखित *निकाहनामा* से संबंधित दस्तावेज़ विवाह की सामाजिक संस्था पर व्यापक प्रकाश डालते हैं, विशेष रूप से, महिलाओं की स्थिति और अधिकारों पर। नमकीन का संबंध खुरासान के एक प्रतिष्ठित ख़ानदान से था, इसलिए *मुंशात* में मध्य एशिया से संबंधित दस्तावेज़ भी अच्छी-ख़ासी संख्या में हैं। इस प्रकार, *मुंशात* अकबर के प्रशासनिक प्रभागों के विकास, विभिन्न संस्थाओं की कार्य-प्रणाली तथा मध्यकाल में प्रचलित विवाह के तौर-तरीक़ों और महिलाओं की स्थिति को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण स्रोत है।

1.5 आधिकारिक दस्तावेज़

सोलहवीं शताब्दी के साथ ही सरकारी दस्तावेज़ों से संबंध रखने वाले प्रलेख प्रचुर हो जाते हैं तथा ये हमें इस काल की समझ विकसित करने में सहायता प्रदान करते हैं। ये सरकारी दस्तावेज़ कई प्रकार के थे। इसमें ***फ़रमान*** (बादशाह के आदेश), ***निशान*** (शाहज़ादों द्वारा जारी आदेश), ***परवाना*** (बादशाह द्वारा अपने अधीनस्थों को जारी निर्देश), ***हस्ब-उल हुक्म*** (बादशाह की आज्ञा से किसी मंत्री द्वारा जारी आदेश), धार्मिक अनुदान प्राप्तकर्ताओं को जारी *फ़रमान* (*सुयूरग़ाल; मदद-ए माश* अनुदान) और *वक़्फ नामा* (धार्मिक संस्थाओं को प्रदत्त अनुदान); *तमस्सुक* (ऋण या पट्टे के संबंध में जारी प्रतिज्ञा पत्र (bond); *अरियतनामा* (ऋण का घोषणा-पत्र); *तजवीज़नामा* (*मनसब* प्राप्ति के लिए प्रत्याक्षी द्वारा प्रस्तुत याचिका); *मुचलका* (प्रतिज्ञा-पत्र [बांड]); नवीन भर्ती किए गए *मनसबदार* द्वारा प्रदत्त आश्वासन कि वह निर्धारित अवधि के भीतर दागने के लिए (muster) घोड़ों को लाएगा); *निरखनामा* (दिन-प्रतिदिन के प्रचलित बाज़ार मूल्यों संबंधी दस्तावेज़); *बैनामा* (बिक्री दस्तावेज), आदि शामिल हैं। अकबर के काल के इस प्रकृति के कुछ महत्वपूर्ण दस्तावेज हैं: सिख गुरु रामदास को जारी अकबर का *फ़रमान*; वृंदावन के चैतन्य पंथ के पुरोहितों को जारी *फ़रमान*; जखबर के *जोगियों* को प्रदत्त अनुदान; बहुत से *मदद-ए माश* अनुदान (धार्मिक प्राप्तकर्ताओं तथा जरूरतमंदों को राजस्व मुक्त भू-अनुदान); बटाला के *परगने* के *मदद-ए माश* से संबंधित *फ़रमान* तथा *परवाने*; राजस्व प्रशासन से संबंधित राजा टोडरमल की विज्ञप्ति ज्ञापन (Memorandum); नहर की हांसी-हिसार शाखा की खुदाई के संबंध में अकबर द्वारा जारी फ़रमान। मांडू में अकबर की ओर से मुनीम खान, खान-ए खानान द्वारा 1562-1567 के दौरान जारी (अकबर शाह बंदा खान खानान; हुक्म खान खानान) एक दुर्लभ *फ़रमान* भी मिलता है जो इस तथ्य पर रोशनी डालता है कि अकबर के शासनकाल के प्रारंभिक वर्षों में, (बादशाह के अतिरिक्त) यहाँ तक कि शक्तिशाली *वकील* खान-ए खानान तक बादशाह के नाम पर *फ़रमान* जारी कर सकते थे (जो कि वास्तव में एकमात्र बादशाह का विशिष्ट प्राधिकार था)। इसके अतिरिक्त, हमें अकबर द्वारा बीकानेर शासक राय राय सिंह को *जागीरों* की पुष्टि तथा सीमा शुल्क से छूट दिए जाने के संदर्भ में भी कई *फ़रमान* प्राप्त होते हैं।

महज़रनामा मुगल काल में जारी अन्य महत्वपूर्ण दस्तावेज़ थे। वे क) 'सबूत के तौर पर एक कानूनी दस्तावेजी साक्ष्य', ख) 'प्रामाणिक दावों की सार्वजनिक मान्यता', और ग) 'अभियोग में एक दस्तावेजी साक्ष्य' के रूप में जारी किए जाते थे। यह एक पीड़ित पक्ष द्वारा *ज़मीदारों*, आदि की मनमानी के खिलाफ उनकी शिकायतों के निवारण के लिए भी प्रस्तुत किए जाते थे। इस संदर्भ में एक दिलचस्प *महज़र* फिरंगी महल (लखनऊ) के प्रसिद्ध विद्वान खानदान द्वारा सम्राट औरंगज़ेब को प्रस्तुत किया

गया था जिसमें उन्होंने अपने पूर्वज की सिहाली (*सरकार* खैराबाद, *सूबा* अवध) के एक *ज़मींदार* द्वारा हत्या के खिलाफ शिकायत दर्ज की। परिणामतः औरंगज़ेब ने उन्हें *हवेली-ए फिरंग* (किसी यूरोपीय फैक्टर द्वारा परित्यक्त हवेली) में उन्हें पुनर्स्थापित करने का आदेश दिया। इसके अतिरिक्त, *निकाहनामा* (विवाह अनुबंध) और *कबीन नामा* (विवाह अनुबंध की शर्तों को औपचारिक रूप से शामिल करने वाले समझौते संबंधी दस्तावेज़) उस काल के मुस्लिम समुदाय में प्रचलित विवाह संबंधी शर्तों की प्रकृति तथा विवाह से संबंधित मसलों पर प्रचलित 'पर्सनल लॉ' (Personal Law) पर महत्वपूर्ण रोशनी डालते हैं।

बोध प्रश्न-3

1) इंशा क्या हैं?

....

....

....

2) इतिहास के एक महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में *मुंशात-ए नमकीन* पर कुछ पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

....

3) सोलहवीं शताब्दी में सरकारी दस्तावेजों के महत्व की चर्चा कीजिए।

....

....

....

1.6 *अख़लाक़* साहित्य

अख़लाक़/निर्देशात्मक साहित्य मुख्य रूप से नीतिशास्त्र और शासन की कला/राजनीतिक सिद्धांत पर रचे गए साहित्य का रूप है। *अख़लाक़* साहित्य मुख्यतः निर्देशात्मक, सैद्धांतिक तथा आदर्शात्मक होता है, जो एक 'आदर्श' शासक के गुणों और कर्तव्यों की व्याख्या करता है। भारत में रची गई इस तरह की प्रारम्भिक कृतियों में फ़ख़्र-ए मुदब्बिर की *आदाब-उल हर्ब वा शुजात* तथा ज़ियादद्दीन बरनी की *फ़तावा-ए जहाँदारी* है। *अख़लाक़* साहित्य में 1235 सी ई में इस्माइली राजकुमार नसीरुद्दीन अब्द अल-रहीम बिन अबी मंसूर के आदेश पर लिखी गई नसीरुद्दीन तूसी की *अख़लाक़-ए नासिरी* एक विशिष्ट स्थान रखती है। बाद में, भारत में लिखे गए लगभग समस्त *अख़लाक़* साहित्य ने अपनी शैली में तूसी की शैली से काफी कुछ ग्रहण किया है। तूसी की कृति को भारत में व्यापक रूप से पढ़ा जाता था और यह अत्यधिक प्रसार में थी। तूसी की कृति मुगल राजनीतिक कुलीनों द्वारा सर्वाधिक पसंद की जाने वाली कृतियों में थी। अबुल फ़ज़ल उल्लेख करता है कि तूसी की *अख़लाक़* अकबर की सबसे प्रिय पांच पुस्तकों में थी और प्रतिदिन इसको उसके सम्मुख पढ़ा जाता था।

मुग़लों से संबंधित सबसे शुरुआती *अख़लाक़* बाबर के काल से संबंधित है। यह इख़्तियारुद्दीन अल-हुसैनी था, जो हेरात का मुख्य *क़ाज़ी* था और उस समय के तैमूरी सुल्तान हुसैन बैक़रा का *वज़ीर* था, जिसने इस तैमूरी सुल्तान को समर्पित करते हुए *दस्तूर अल-विज़ारत* की रचना की। लेकिन, हेरात में तैमूरियों के पतन के बाद उसने बाबर की सेवा ग्रहण की और इस ग्रंथ के संशोधित संस्करण को *अख़लाक़-ए हुमायूँनी* के नाम से बाबर को प्रस्तुत किया। अन्य महत्वपूर्ण *अख़लाक़* कृति जहाँगीर के काल में नूरुद्दीन क़ाज़ी अल-ख़ाक़ानी द्वारा रचित *अख़लाक़-ए जहाँगीरी* थी। चूँकि यह कृति जहाँगीर के काल में रची गई थी, इसलिए इसकी चर्चा हम यहाँ नहीं करेंगे, बल्कि हमारे पाठ्यक्रम **बी एच आई सी-112** में यह चर्चा का हिस्सा रहेगी।

अख़लाक़-ए हुमायूँनी 'बादशाह के उच्च नैतिक आदर्शों' को स्पष्ट करती है तथा 'क़ानून और शासन के स्वरूपों' पर विचार करती है। अल-हुसैनी *अद्ल* (न्याय) तथा 'परस्पर-सहयोग' को सर्वोच्च स्थान देता है। उसके अनुसार न्याय को सुनिश्चित करने के लिए *शरिया* के सिद्धांत और एक 'न्यायपूर्ण

राजा' का होना अनिवार्य है और इसे शक्ति के बल पर नहीं बल्कि 'प्रेम और अनुकंपा' के द्वारा हासिल किया जाना चाहिएः

> मानव के मामलों को परस्पर-सहयोग द्वारा शासित होना चाहिए, जो न्याय (*अद्ल*) पर आधारित होता है। यदि *अद्ल* का नाश हो जाए तो प्रत्येक व्यक्ति स्वयं की इच्छा का ही अनुसरण करेगा। अतः एक संस्था (*दस्तूर*) होनी चाहिए और एक संतुलनकारी अभिकर्ता (एजेंसी), जो सहयोग को सुनिश्चित करें, *शरिया...* इस उद्देश्य की पूर्ति करती है। लेकिन *शरिया* भी बिना एक न्यायपूर्ण राजा द्वारा लागू हुए काम नहीं कर सकती है, जिसका मुख्य कर्तव्य अपने 'प्रेम तथा अनुकंपा' से लोगों को नियंत्रण में रखना है।
>
> **मुज़फ़्फ़र आलम 2004: 54.55**

हुसैनी के मुताबिक 'मुस्लिम' तथा 'काफ़िर' दोनों ही बिना किसी विभेद के 'दैवीय अनुकंपा' का उपभोग करते हैं:

> आदर्श राजनीतिज्ञ ... अपनी रियाया को पुत्रों और मित्रों की भांति समझता है और अपनी बुद्धि के माध्यम से अपने लालच और कामनाओं को नियंत्रण में रखता है।
>
> **मुज़फ़्फ़र आलम 2004: 56**

अख़लाक़ साहित्य में न्याय, सामाजिक सौहार्द्र तथा परस्पर-सहयोग के समर्थन में दिए गए बल ने शासन के मुगल आदर्श को प्रभावित किया। प्रजा को 'पुत्रों तथा मित्रों' की तरह संबोधित किया गया है, अतः राजा और उसकी प्रजा के बीच के संबंध पैतृक-प्रेम वाले थे, जो अकबर के *सुलह-ए कुल* के आदर्श के साथ संगति रखते थे। अकबर द्वारा अपने अधीनस्थ अधिकारियों को जारी आचरण संहिता (दस्तूर) में *अख़लाक़* को स्थान दिया गया हैः

> जब भी अधिकारीगण अपने सार्वजनिक कार्यों से फुरसत पाते हैं तो उन्हें पवित्र और सज्जनों द्वारा रचित किताबों का अध्ययन करना चाहिए, जैसे *अख़लाक़* पर लिखी गई किताबें जो नैतिक और आध्यात्मिक कष्टों को दूर करती हैं ...
>
> **मुज़फ़्फ़र आलम 2004: 62**

इस प्रकार *अख़लाक़* साहित्य मुग़लों के अधीन शासन-कला को समझने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

बोध प्रश्न-4

1) *अख़लाक़* साहित्य को परिभाषित कीजिए।

....

....

....

2) प्रारंभिक मुगल काल में रचित कुछ निर्देशात्मक लेखनों के नाम बताइए।

....

....

....

1.7 भारतीय रचनाओं का फ़ारसी अनुवाद

इबादत ख़ाना की स्थापना के समय ही अकबर ने 1574-1575 में अनुवाद ब्यूरो (*मकतब-खाना*) की स्थापना फ़तेहपुर सीकरी में की थी और इसे शाही पुस्तकालय से जोड़ दिया गया था। मुख्यतः संस्कृत ग्रंथों का फ़ारसी में अनुवाद किया गया, हालांकि, कुछ अरबी और तुर्की ग्रंथों का भी फ़ारसी में अनुवाद किया गया था। इनमें सबसे ग़ौरतलब अकबर के प्रसिद्ध विद्वान कुलीन अब्दुल रहीम ख़ान-ए ख़ानान द्वारा *बाबरनामा* का किया गया फ़ारसी अनुवाद है। कुछ विद्वान यह संकेत करते हैं कि अनुवाद की यह परियोजना हिंदुओं को शांत और संतुष्ट करने से कहीं अधिक थी, बल्कि इसका उद्देश्य फ़ारसी का दर्जा आधिकारिक भाषा और 'आम-जन' की भाषा के रूप में ऊँचा उठाने के लिए अधिक था।

अकबर के दरबार में अनुवाद की यह परियोजना संभवतः 1575-76 में एक धर्मांतरित ब्राह्मण शेख़ भवन के अकबर के दरबार में पहुंचने के बाद शुरू हुई। शेख भवन की सहायता से हाजी इब्राहिम सरहिंदी द्वारा संस्कृत से फ़ारसी में अनुवादित प्रारंभिक ग्रंथों में से एक *अथर्ववेद* (*बेद अथर्बन*) का अनुवाद था, जो 1583 से पहले कभी किया गया था। 1582 में अकबर ने *महाभारत* (*रज़्मनामा*) का अनुवाद शुरू करवाया और बदायूनी को इस ग्रंथ के अनुवाद का ज़िम्मा दिया; बाद में इस कार्य को मुल्ला श्री, नकीब ख़ान और सुल्तान हाजी थानेसरी द्वारा पूरा किया गया। अबुल फ़ज़ल ने इस फ़ारसी ग्रंथ की प्रस्तावना लिखी थी। फ़ैज़ी से *महाभारत* का काव्यात्मक संस्करण पूरा करने के लिए कहा गया था किंतु वह इस कार्य को पूरा नहीं कर सका था।

बदायूनी द्वारा *महाभारत* के अनुवाद के विषय में दिए गए वर्णन से अकबर के दरबार में किस प्रकार अनुवाद कार्य को संपन्न किया जाता था, इस पर प्रकाश पड़ता है। पहले संस्कृत ग्रंथ को पंडितों और विद्वानों द्वारा 'हिंदी' में बयान किया जाता था और इसके बाद इसे फ़ारसी में लिखा जाता था। अनुवाद की सटीकता को लेकर अत्यंत सावधानी बरती जाती थी। बदायूनी को *महाभारत* के फ़ारसी अनुवाद में त्रुटियों के लिए अकबर का गुस्सा झेलना पड़ा था।

बदायूनी ने *रामायण* का अनुवाद भी किया था। यह परियोजना 1591 में पूरी हुई थी। निज़ाम पानीपती ने *योगवशिष्ठ* (वेदांत दर्शन पर एक ग्रंथ) का अनुवाद *रामायण* के एक परिशिष्ट के रूप में किया था और इसे शहज़ादे सलीम को समर्पित किया गया था। मुल्ला श्री ने *हरिवंश* (हरिबंस, फ़ारसी में कृष्ण की वंशावली) का अनुवाद भी किया।

ग़ैर-धार्मिक प्रकृति के संस्कृत ग्रंथों में, फ़ारसी में अनुवादित होने वाला अकबर के दरबार में सबसे महत्वपूर्ण ग्रंथ भास्कराचार्य की *लीलावती*, गणित संबंधी कृति, था, जिसे फ़ैज़ी ने अनुवादित किया था। कल्हण की *राजतरंगिणी* का अनुवाद शाह मुहम्मद शाहाबादी द्वारा किया गया था।

कुछ संस्कृत ग्रंथों का अनुवाद नहीं किया गया था बल्कि वे वास्तव में संस्कृत ग्रंथों का फ़ारसी में नए ढंग से बखान था, इस श्रेणी में फ़ैज़ी की *नल-दमन* आती है।

यह अनुवाद इस ओर संकेत करते हैं कि अकबर की अनुवाद परियोजना में *महाभारत* का केंद्रीय स्थान था जो यह संकेत करता है कि अकबर के दरबार में शैव परंपराओं के बजाय वैष्णव परंपराओं का प्रभाव था। *उपनिषदों* के दर्शन में रुचि और उनके अध्ययन पर बल केवल शाहजहाँ के काल में दाराशिकोह के संरक्षण (*सिर्र-ए अकबर*) में ही पैदा हो पाया था। भगवान राम की 'हिंदू राजाओं के आदर्श' के रूप में कल्पना की गई थी, अकबर का वर्णन भी विष्णु के अवतार के रूप में किया गया था। ट्रश्के (2016: 209) के द्वारा उचित ही कहा गया है कि अकबर की अनुवाद परियोजना ने 'शाही सत्ता के संबंध में अकबर के विचार को विभिन्न धार्मिक परंपराओं के आर-पार व्याप्त करने में सहायता की'।

बोध प्रश्न-5

1) अकबर के काल में अनुवादित प्रमुख संस्कृत ग्रंथों के नाम बताइए।

....

....

....

2) संस्कृत से फ़ारसी में अनुवाद करने में *मकतब-ख़ाना* की भूमिका पर चर्चा कीजिए।

....

....

....

1.8 सारांश

मुगलों के तहत राजनीतिक इतिवृत्तों की एक श्रृंखला का सृजन हुआ। लेकिन, अबुल फ़ज़ल के साथ इसमें एक बिल्कुल नवीन बदलाव आया। उसके द्वारा तर्क तथा तर्कपूर्ण विश्लेषण पर दिए गए बल

ने इतिहास लेखन की परंपरा में एक नया आयाम जोड़ा। इतिवृत्तों के वृत्तांतों के अलावा मध्यकाल आधिकारिक दस्तावेज़ों (*फ़रमान, मंशूर, परवाना,* इत्यादि) तथा *इंशा* साहित्य में भी समृद्ध है। अकबर का काल बहुत सी संस्कृत कृतियों के फ़ारसी अनुवाद के लिए भी उल्लेखनीय रहा है।

1.9 शब्दावली

अर्ज़दाश्त	याचिकाएँ/किसी परिस्थिति का प्रतिवेदन
फ़रमान	बादशाह का आदेश
हस्ब-उल हुक्म	बादशाह के निर्देश पर मंत्री द्वारा जारी आदेश
मीर अद्ल	न्यायिक अधिकारी; जो मुख्य रूप से न्यायिक निर्णयों को लागू करने के लिए उत्तरदायी था
मीर बहर	नदी यातायात के लिए ज़िम्मेदार; नावों, नाविकों तथा जहाज़ियों और पुलों का बंदोबस्त करता था
मीमार	भवन निर्माण का प्रभारी
निशान	शाहज़ादों द्वारा जारी किए गए आदेश
परवाना	बादशाह द्वारा अपने अधीनस्थों को जारी आदेश/निर्देश

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) देखें भाग 1.2
2) देखें भाग 1.2
3) i) चग़ताई तुर्की; ii) *खुत्ताब;* iii) *दीवान-ए इंशा /दीवान अल-रसाइल;* iv) *सबक़-ए हिन्दी*

बोध प्रश्न-2

1) देखें उप-भाग 1.3.1
2) देखें उप-भाग 1.3.1
3) देखें उप-भाग 1.3.1
4) देखें उप-भाग 1.3.2
5) देखें उप-भाग 1.3.3

बोध प्रश्न-3

1) देखें भाग 1.4
2) देखें भाग 1.4
2) देखें भाग 1.5

बोध प्रश्न-4

1) देखें भाग 1.6
2) देखें भाग 1.6

बोध प्रश्न-5

1) देखें भाग 1.7

2) देखें भाग 1.7

1.11 संदर्भ ग्रंथ

आलम, मुज़फ़्फ़र, (2004) द *लैंग्विज ऑफ़ पोलिटिकल इस्लाम इन इंडिया c.*1200-1800 (नई दिल्लीः पर्मानेंट ब्लैक).

हार्डी, पीटर, (1966) हिस्टॉरियंस ऑफ़ मिडिवल इंडिया (लंदनः लुजाक एंड कम्पनी).

हसन, मोहिबुल, (2018 [1982]) *हिस्ट्री एंड हिस्टॉरियंस ऑफ़ मिडिवल इंडिया* (नई दिल्लीः आकार बुक्स).

हबीब, इरफ़ान, (संपा.) (1999) *अकबर एंड हिज़ इंडियाः हिज़ एम्पायर एंड इन्वायरमेंट* (दिल्लीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

ख़ान, इक़्तिदार आलम, (संपा.) (1999) *अकबर एंड हिज़ ऐज* (नई दिल्लीः नॉरदर्न बुक सेंटर).

खान, इक्तिदार आलम, (2009) 'ट्रेसिंग सोर्सेज़ ऑफ प्रिंसिपल्स ऑफ मुगल गवर्नेन्सः ए क्रिटीक ऑफ रीसेंट हिस्टोरियोग्राफी', *सोशल साइंटिस्ट*, भाग 37, नं. 5/6 (मई-जून), पृ. 45-54.

मुखिया, हरबंस, (2017 [1976]) *हिस्टॉरियंस एंड हिस्टोरियोग्राफ़ी ड्यूरिंग द रेन ऑफ़ अकबर* (नई दिल्लीः आकार बुक्स).

निज़ामी, के. ए., (1982) *ऑन हिस्ट्री एंड हिस्टॉरियंस ऑफ़ मिडिवल इंडिया* (नई दिल्लीः मुंशीराम मनोहरलाल).

ट्रश्के, ऑड्री, (2016) *कल्चर ऑफ़ एनकाउंटर्सः संस्कृत एट ए मुग़ल कोर्ट* (गुड़गाँवः पेंग्विन बुक्स).

1.12 शैक्षणिक वीडियो

अबुल फज़लः क्रॉनिकलिंग अकबर एंड हिज़ इंडिया
https://www.youtube.com/watch?v=yJ4iRSqg48M

मुगल हिस्टोरियोग्राफी एंड सोर्सेस
https://www.youtube.com/watch?v=qODAcOrYsBg-t=923s

मुगल हिस्टोरियोग्राफी एंड सोर्सेस- I
https://www.youtube.com/watch?v=m2KLMxyWh9Q&t=685s

मुगल हिस्टोरियोग्राफी एंड सोर्सेस- II
https://www.youtube.com/watch?v=LeU25fxsvvE

हिस्टोरियोग्राफी एंड सोर्सेस -2 (पर्शियन सोर्सेस)
https://www.youtube.com/watch?v=42Tc0UgX2B0

इकाई 2 भारतीय साहित्यिक परम्पराएँ तथा यूरोपीय स्रोत*

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 भारतीय साहित्यिक परम्पराएँः साम्राज्यिक तथा उप-साम्राज्यिक प्रसारण

2.2.1 संस्कृत साहित्य

2.2.2 ब्रजभाषा साहित्य

2.2.3 राजस्थानी साहित्य

2.2.4 असम *बुरुंजी* साहित्य

2.3 यूरोपीय यात्रियों की मुग़ल भारत की समझ

2.3.1 जेसुइटों के वृत्तांत

2.3.2 अंग्रेज़ यात्री

2.4 सारांश

2.5 शब्दावली

2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.7 संदर्भ ग्रंथ

2.8 शैक्षणिक वीडियो

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपः

- 'साम्राज्यिक' संरक्षण में संस्कृत भाषा तथा साहित्य के विकास को समझ पाएँगे,
- एक प्रमुख साहित्यिक परम्परा के रूप में ब्रजभाषा के उदय को रेखांकित कर पाएँगे,
- अवध क्षेत्र में खड़ीबोली/अवधी के क्रमिक विकास तथा इसके प्रतिनिधि प्रणेयताओं, विशेषकर आचार्य तुलसीदास, के विषय में जान पाएँगे,
- भारतीय साहित्यिक परम्पराओं को प्राप्त 'साम्राज्यिक' तथा 'उप-साम्राज्यिक' संरक्षण की प्रकृति को समझ पाएँगे,
- कई नई साहित्यिक विधाओं के जन्म तथा शुरुआत का मूल्यांकन कर पाएँगे,
- *मंगल काव्य* तथा *बुरुंजी* के महत्व तथा पूर्वी भारत व असम के तत्कालीन समाज और राजव्यवस्था को समझने में उनके योगदान की पहचान कर पाएँगे,
- राजव्यवस्था, समाज तथा ***इबादत ख़ाना*** की बहस के दौरान सामने आए धार्मिक तनावों तथा अंतर्विरोधों को समझने में जेसुइटों के वृत्तांत के महत्व की समीक्षा कर पाएँगे, और
- यूरोपियों के वाणिज्यिक हितों तथा उनके मुग़लों से साक्षात्कारों का पर्यवेक्षण कर पाएँगे।

*** प्रो. आभा सिंह, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली**

2.1 प्रस्तावना

यह इकाई ऐतिहासिक स्रोत-सामग्री के दो विशिष्ट पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करती हैः एक का संबंध भारतीय साहित्यिक परंपरा से है तो दूसरा यूरोपीय स्रोतों से संबंध रखता है। यह इकाई मुख्यतः सोलहवीं शताब्दी पर केंद्रित है तथा मोटे तौर पर 1605 के बाद की स्रोत-सामग्रियाँ मुख्यतः इस इकाई का विषय नहीं होंगी।

हमने मुग़ल काल में भारतीय साहित्यिक परंपरा के विकास की चर्चा दो इकाइयों में की है। फ़ारसी परंपरा को प्राप्त शाही संरक्षण को इन दोनों इकाइयों की परिधि से बाहर रखा गया है। फ़ारसी साहित्यिक परम्परा के विकास की चर्चा पहले ही **इकाई 1** में की जा चुकी है। भारतीय साहित्यिक परंपरा पर दो पृथक इकाइयों में चर्चा का कारण है: अ) **इकाई 2** में हमारा ध्यान उन ग्रंथों की चर्चा पर केंद्रित रहेगा जो ऐतिहासिक रूप से 'प्रासंगिक' हैं तथा हमारी 'ऐतिहासिक' समझ को समृद्ध करने हेतु 'अत्यंत महत्वपूर्ण' जानकारी उपलब्ध कराते हैं; ब) वहीं **इकाई 18** में हम क्षेत्रीय साहित्यिक परम्परा के सामान्य विकास तथा 'साम्राज्यिक' (मुग़ल) और 'उप-साम्राज्यिक' (क्षेत्रीय) स्तर पर इसको प्राप्त संरक्षण का विवेचन करेंगे।

क्षेत्रीय भाषा-साहित्य, विशेष रूप से *वीरगाथा काव्य* (शौर्यपूर्ण काव्य) और *ऐतिहासिक काव्य* सर्वाधिक महत्व के हैं। क्षेत्रीय साहित्य-ग्रंथों में उस काल की ऐतिहासिक सामग्री को ख़ोजने के लिए इन ग्रंथों के 'विन्यास' (texture) पर गहन दृष्टि डालना ज़रूरी है, जैसा कि संजय सुब्रह्मण्यम, नारायण राव तथा डेविड शुलमैन ने इसे परिभाषित किया है। आपको इसमें कुछ प्रशस्तियाँ देखने को मिलेंगी, कुछ काव्यात्मक-शौर्यत्व में रंगी हुई; जबकि उनमें से कुछ उस काल की तथ्यात्मक जानकारी को उपलब्ध कराती हैं।

यह ध्यान में रखना ज़रूरी है कि साहित्यिक रचनाएँ ऐतिहासिक आख्यानों की तरह नहीं होती हैं, इनमें तिथियों और कालानुक्रमों पर शायद ही ध्यान दिया जाता है। लेकिन, ये उस समय की भावनाओं और सामाजिक परिवेश को प्रतिबिंबित करती हैं; उस काल की वंशावलियों, जीवनियों तथा सांस्कृतिक ढाँचे, इत्यादि पर प्रकाश डालती हैं। बुश (2009: 25) का तर्क है कि क्षेत्रीय भाषा-साहित्य का 'संवेदनशीलता के साथ इतिहास में झांकने हेतु एक खिड़की की तरह उपयोग किया जा सकता है'।

सोलहवीं शताब्दी से दक्षिण एशिया की स्रोत सामग्री में एक अन्य महत्वपूर्ण तत्व और जुड़ जाता है, वह है यूरोपीय यात्रियों के विवरण। हम भारतीय समुद्री-क्षेत्रों में पुर्तगालियों के आगमन की चर्चा अपने पाठ्यक्रम **बी एच आई सी-107** में विस्तार से कर चुके हैं। चूँकि हमारा ध्यान सोलहवीं शताब्दी पर केंद्रित है, यहाँ, हम मुख्यतः उन यूरोपीय यात्रियों के विषय में, जिन्होंने अकबर के दरबार में भ्रमण किया, तथा उनकी तत्कालीन राजव्यवस्था, अर्थव्यवस्था, समाज से उनकी अंतःक्रिया और इस संबंध में उनके अनुभव और सबसे महत्वपूर्ण, भारतीय धार्मिक परम्पराओं तथा इस्लाम से उनके रुबरु होने का विवेचन करेंगे।

2.2 भारतीय साहित्यिक परम्पराएँ: साम्राज्यिक तथा उप-साम्राज्यिक प्रसारण

मध्यकालीन भारतीय साहित्यिक परंपरा का महत्व इस तथ्य में निहित है कि इसने 'साम्राज्यिक' तथा 'स्थानीय' सांस्कृतिक परम्पराओं के बीच संपर्क के रूप में कार्य किया। इसने मुग़ल दरबार की संस्कृति/मुग़ल सत्ता के प्रसार को स्थानीय परिप्रेक्ष्य से उजागर करने का भी कार्य किया।

2.2.1 संस्कृत साहित्य

इकाई 1 में हम अकबर के दरबार में अनुवाद परियोजना की चर्चा कर चुके हैं। अतः, संस्कृत ग्रंथों के फ़ारसी अनुवादों को इस खंड के विषय-क्षेत्र से बाहर रखा गया है। आपने यह अवश्य ध्यान दिया होगा कि 'साम्राज्यिक' अनुवाद परियोजना भारतीय तथा इस्लामी परम्पराओं के अनूठे सम्मिश्रण तथा आत्मसातीकरण को प्रदर्शित करती हैँ (*महाभारत* [*रज़्मनामा*] के अनुवाद के अपने परिचय में) अकबर को हिंदू देवताओं के अवतार के रूप में चित्रित किया गया है। अबुल फ़ज़ल ने अकबर को विष्णु भगवान के अवतार के रूप में वर्णित किया है।

अकबर के दरबार में उपस्थित संस्कृत विद्वान मुख्यतः ब्राह्मण तथा जैन समुदाय से संबंधित थे। जहाँ ब्राह्मणों ने मुख्यतः स्वयं को दरबार के घटनाक्रमों से अलग रखा, इसके विपरीत, वहीं जैन अपने परिवश से काफ़ी प्रभावित थे तथा उन्होंने अपने समय/दरबार के समानांतर घटनाक्रमों तथा अपने काल की संस्कृति के विषय में भी लिखा तथा उस पर टिप्पणी की। जैनों ने अपने ***काव्यों, चरितों*** तथा ***प्रबंधों*** (आख्यानात्मक काव्य) में ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख किया है, जिन्हें अनिवार्यतः 'शुद्ध' रूप से ऐतिहासिक लेखन नहीं कहा जा सकता है, तथापि कुछ पहलुओं के संबंध में वे महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराते हैं जो अन्यथा मुख्यधारा के कहे जाने वाले फ़ारसी लेखनों से उपलब्ध नहीं होती है। ऑड्री ट्रश्के जैन संस्कृत रचनाओं को 'वास्तविक विवरणों तथा कल्पनात्मक पुनर्कथन के बीच कहीं' रखती हैं। इन संस्कृत ग्रंथों के वर्णन मुख्यतः भारतीय राजाओं तथा मुग़ल विजयों पर केंद्रित हैं, और यहाँ तक कि *अकबरनामा* के अनुवाद (*सर्वदेशवृत्तांतसंग्रह*) का प्रयास भी देखने को मिलता है, जो संभवतः किसी फ़ारसी ग्रंथ के संस्कृत अनुवाद का एकमात्र प्रयास था।

अकबर के संरक्षण में, शांतिचंद्र ने *c.*1587 में *कृपासकोश* (करुणा का कोश) की रचना की। शांतिचंद्र अकबर के पूर्वजों, उसके जन्म तथा उसके बचपन का वर्णन प्रदान करता है। वह काबुल के शहरी परिदृश्य का चित्रात्मक विवरण देता है। वह खुरासान को भारत के परिक्षेत्र से बाहर स्थित मानता है तथा इस 'विदेशी भूमि' का संबंध वह अखरोट, खजूर तथा घोड़ों से जोड़ता है। दिलचस्प ढंग से, उसने बाबर तथा हुमायूँ को भारतीय राजाओं की परिधि से बाहर रखा है तथा भारतीय उपमहाद्वीप में मुग़ल विस्तार हेतु उसने एकमात्र अकबर के प्रयासों पर बल दिया है। यह जैन विद्वान रायमल्ल के लेखनों (*जंबूस्वामीचरित*) के बिल्कुल उलट है, जिसमें वह बाबर के *दिल्लीश* (दिल्ली का स्वामी) बनने का उल्लेख करता है। वह मुग़ल सेना, ख़ासकर गुजरात विजय (1570-72), का जीवंत विवरण भी उपलब्ध भी कराता है। वह अकबर की विजयों को *दिग्विजय* (चारों दिशाओं की जीत) के रूप में प्रस्तुत करता है। उसने कुछ श्लोक अकबर द्वारा निर्मित फ़तेहपुर सीकरी को भी समर्पित किए हैं। वह अकबर की दया (*कृपा*) की प्रशंसा भी करता है। शांतिचंद्र की रचना अकबर के अधीन जैन प्रभाव की मौजूदगी का संकेत करती है। वह वर्णन करता है कि जैन प्रभाव में अकबर द्वारा कई रियायतों की घोषणा की गई, *जज़िया* को हटाना, गौ-माता के प्रति आदर, इत्यादि। शांतिचंद्र द्वारा अकबर की तुलना महान् जैन-संरक्षक चालुक्य राजा कुमारपाल से भी की गई है। शांतिचंद्र मुग़ल दरबार में जैन सफलता पर हर्ष प्रकट करता है तथा स्वयं को अपने समुदाय के प्रतिनिधि के रूप में पेश करता है।

अन्य संस्कृत जैन रचनाएँ जो जैन-मुग़ल सम्बन्धों की चर्चा करती हैं, पद्मसागर की *जगद्गुरुकाव्य* (1589), जयसोम की *मंत्रिकारामचंद्रवंशावली प्रबंध* (1594), देवविमल की *हीरसौभाग्य* (प्रारम्भिक सत्रहवीं शताब्दी), तथा सिद्धिचन्द्र की *भानुचन्द्रगनिचरित* (अकबर तथा जहाँगीर के काल में तप गच्छ के प्रधान भानुचंद्र को समर्पित एक रचना)। पद्मसागर की *जगदगुरुकाव्य* (1589) मुग़लों की सत्ता के उत्कर्ष को समझने के लिए महत्वपूर्ण है। वह बाबर को हिंदुस्तान (*भारत*) के बाहर रखता है तथा हुमायूँ को प्रथम मुग़ल राजा और मुग़लों को एक भारतीय वंश के रूप में दर्ज़ करता है। यह रचना हुमायूँ तथा अकबर के सैन्य अभियानों का विशेष उल्लेख करती है। *इबादत ख़ाना* की परिचर्चा के दौरान मुग़ल-जैन संवाद पर यह ग्रंथ दिलचस्प रोशनी डालता है। पद्मसागर ने इस तथ्य पर बल दिया है कि काबुल-दिल्ली मार्ग की सुरक्षा ने जैन समुदाय की आर्थिक समृद्धि को सुनिश्चित किया। वह मालवा तथा गुजरात के क्षेत्रों में हुमायूँ द्वारा लायी गई समृद्धि के विषय में भी बताता है। इसी प्रकार, रुद्रकवि 1596 में रचित अपने ग्रंथ *राष्ट्रौधवंशमहाकाव्य* में हुमायूँ तथा बहादुरशाह के मध्य हुए युद्ध का उल्लेख करता है। लेकिन, इन विवरणों को अक्षरक्षः स्वीकारने से सावधान रहने की ज़रूरत है। रुद्रकवि भ्रामक रूप से विजय का श्रेय बहादुरशाह को देता है। जैन ग्रंथों में मुस्लिम शासकों को भारतीय शासकों की व्यापक परिधि में ही गिना गया है तथा इस्लाम को देश से इत्तर किसी भिन्न धर्म-परंपरा के रूप में चित्रित नहीं किया गया है। देवविमल ने अपने दरबार प्रवास के दौरान, *हीरसौभाग्य* में 1583-1585 में अबुल फ़ज़ल तथा हीरविजय के बीच इस्लाम तथा जैन धर्म की विशिष्टताओं को लेकर हुए विवादों/संवादों को शामिल किया है। यह रचना अबुल फ़ज़ल के जैन धर्म के प्रति झुकाव का संकेत भी करती है। देवविमल का वृत्तांत जैन-मुग़ल संबन्धों पर प्रकाश डालता है, विशेषकर हीरविजय द्वारा अकबर को जैन शिक्षाओं से परिचित कराने संबंधी देवविमल द्वारा की गई चर्चा। जैन स्रोत हीरविजय तथा विजयसेन के साथ अकबर की वार्ता (*विजयप्रशस्तिमहाकाव्य*) को भी दर्ज़ करते हैं, जिसने इन जैन विद्वानों से 'ईश्वर' संबंधी जैन अवधारणा को स्पष्ट करने को कहा था, ख़ासकर ब्राह्मणों की इस आक्षेप की व्याख्या करने

को कि जैन ईश्वर के अस्तित्व को नकारते हैं, जिस पर हीरविजय तथा विजयसेन ने अपने *अरिहंत* के विचार की सुस्पष्ट व्याख्या की, जो रूप तथा गुण दोनों से परे है। इसी प्रकार, सिद्धिचंद्र ने अपनी *भानुचन्द्रगनिचरित* में अबुल फ़ज़ल के भारतीय शास्त्रीय परम्परा संबंधी ज्ञान की प्रशंसा की है।

संस्कृत स्रोत उन मुग़ल दरबारी जीवन के पहलुओं को जानने के लिए अत्यंत विशिष्ट हैं जिन पर फ़ारसी स्रोत अक्सर मौन रहे हैं। जैन विद्वान कृष्णदास ने द्विभाषी व्याकरण *पारसीप्रकाश* (सोलहवीं शताब्दी के अंत में रचित) की रचना की। इसमें, उसने अकबर की प्रशंसा विष्णु के *अवतार* के रूप में की है।

एक अज्ञात विद्वान द्वारा रचित *अल्लोपनिशद्* (अल्लाह का *उपनिषद्*; दस श्लोकों का एक संक्षिप्त ग्रंथ) 'अल्लाह' की पहचान हिंदू देवताओं के 'समकक्ष-रूप' में करता है। यह ग्रंथ *अल्लाह-हू अकबर* वाक्यांश का प्रयोग जानबूझकर दोहरे अर्थ में करता है – 'ईश्वर महान् है' तथा 'अकबर ईश्वर है'। इस प्रकार, यह ग्रंथ अकबर की धार्मिक विश्वदृष्टि समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह अकबर की पहचान *रसूल* (पैग़म्बर) के रूप में करता है। दिलचस्प है कि *अल्लोपनिशद्* को फ़ारसी लेखनों में ग़ायब कर दिया गया है, किंतु यह *अथर्ववेद* की संस्कृत प्रतियों में पूर्णतः संरक्षित है।

फ़ारसी ग्रंथों ने जैन तथा ब्राह्मण साहित्यविदों को प्रदत्त संस्कृत उपाधियों की भी उपेक्षा की है। वहीं अकबर के दरबार की बहु-सांस्कृतिक जीवंतता के कुछ विशिष्ट पहलुओं की जानकारी का पता हमें केवल इन प्राप्य संस्कृत ग्रंथों से ही चल पाता है। *भानुचंद्रगनिचरित* जैन विद्वान भानुचंद्र की जीवनी है जिसके लेखक सिद्धिचन्द्र हैं। वह वर्णन करते हैं कि अकबर द्वारा उनकी बौद्धिक उपलब्धियों के आधार पर उन्हें *उपाध्याय* की उपाधि दी गई थी। प्रमुख जैन विद्वान हीरविजय को *जगद्‌गुरु* का विरुद् अकबर द्वारा प्रदान किया गया था। इसकी जानकारी हमें हीरविजय की दो जीवनियों (*जगद्‌गुरुकाव्य* तथा *हीरसौभाग्य*) से पता चलता है। इसी प्रकार, 1600-1601 में नरसिंह को दी गई *ज्योतिर्वित्सरस* की उपाधि के विषय में हमें उनके पुत्र रघुनाथ की रचना *मुहूर्तमाला* से ज्ञात होता है।

यह रोचक तथ्य है कि अकबर ने अपने मुस्लिम *उमरा* को भी संस्कृत उपाधियाँ प्रदान कीं। अकबर ने अबुल फ़ज़ल को उसके प्रशंसापूर्ण दक्खन अभियान हेतु *दलालंबन* (सेना का स्तम्भ) की उपाधि से सुशोभित किया। यह एक ऐसा तथ्य है जिसे अबुल फ़ज़ल ने अपने फ़ारसी आख्यानों में अनदेखा किया है तथा जिसके बारे में हम केवल सिद्धिचन्द्र द्वारा रचित भानुचंद्र की जीवनी *भानुचंद्रगणिचरित* के माध्यम से जानते हैं। इसी प्रकार, देवविमल, भानुचंद्र का अन्य जीवनीकार, अपनी रचना *हीरसौभाग्य* में वर्णन करता है कि अकबर ने विजयसेन, संस्कृत के एक अन्य विद्वान, को *सवाई* की उपाधि से नवाज़ा था। इसी प्रकार, इसमें यह भी वर्णित है कि अकबर ने हीरविजय को पद्मसमुद्र का पुस्तक-संग्रह सौंपा तथा उसके लिए एक जैन पुस्तकालय की स्थापना भी की।

संस्कृत का एक अन्य महत्वपूर्ण जैन विद्वान रुद्रकवि था, जिसने मुग़ल दरबारी संस्कृति के बारे में विस्तार से लिखा। उसने चार मुख्य *प्रबंध*-ग्रंथों की रचना कीः *दानसाहचरित* (1603), *खानखानाचरित* (1609), *जहाँगीरचरित* (1610-1620), तथा *कीर्तिसमुल्लास* (1610-1620)। उसने 1596 में बगलान वंश का इतिहास भी लिखा। इस ग्रंथ की रचना जिसे उसने नासिक के निकट स्थित बगलाना की छोटी सी रियासत, जिसने 1630 के दशक तक स्वायत्तता का उपभोग किया था, हालांकि अकबर द्वारा उसे 1570 के दशक में अपने प्रभाव में लाया गया था, के अपने संरक्षक प्रतापशाह के आदेश पर लिखा था। रुद्रकवि ने ख़ान-ए ख़ानान की छवि एक शक्तिशाली सैन्य कमांडर के रूप में पेश की है। यह ग्रंथ बगलाना रियासत के दृष्टिकोण से मुग़ल-बगलाना संघर्षों का विस्तृत विवरण उपलब्ध कराता है जहाँ ख़ान-ए ख़ानान को सेना का नेतृत्व करने भेजा गया था। इससे हमें प्रतापशाह द्वारा रुद्रकवि को ख़ान-ए ख़ानान के दरबार में समझौते हेतु कूटनीतिज्ञ के रूप में भेजे जाने का भी पता चलता है। रुद्रकवि का वृत्तांत ख़ान-ए ख़ानान की शक्ति तथा प्रभाव को विशेष रूप से उजागर करता है। वह अहमदनगर (मलिक अम्बर) के खिलाफ़ अकबर के दक्खन अभियान में प्रतापशाह के द्वारा हिस्सा लिए जाने का भी उल्लेख करता है। यहाँ, वह न केवल ख़ान-ए ख़ानान की शक्ति का बखान करता है, बल्कि इस अभियान में उसके पुत्रों इराज तथा दाराब के भाग लेने का भी उल्लेख करता है, जिनकी तुलना वह शंबरों से लड़ते हुए दो 'कामदेवों' से करता है।

इस प्रकार, जैन, संस्कृत तथा अन्य भारतीय साहित्य के माध्यम से हम शाही दरबार में क्षेत्रीय भाषाओं के विद्वानों की जीवंत उपस्थिति के बारी में जान पाते हैं, जिसके संबंध में फ़ारसी अदब के लेखकों में लगभग मौन छाया हुआ है।

शत्रुंजय, गुजरात में स्थित एक जैन धार्मिक केंद्र, में स्थित संस्कृत अभिलेख भी सोलहवीं शताब्दी में उपमहाद्वीप में जैनों की जीवंत उपस्थिति पर प्रकाश डालते हैं। आदिश्वर मंदिर में स्थित 1595 का अभिलेख हीरविजय तथा विजयसेन के कृत्यों तथा उनके मुग़लों से संबंध का उल्लेख करता है। यह हीरविजय द्वारा अकबर से प्राप्त अनुकम्पाओं की चर्चा करता है, जैसे, गौ-हत्या का निषेध, *जज़िया* तथा तीर्थ-कर की समाप्ति, जैन पुस्तकालय की स्थापना, इत्यादि। पाटन संस्कृत अभिलेख अकबर द्वारा पशु-वध पर रोक तथा खम्भात की खाड़ी में मछली पकड़ने के निषेध का उल्लेख भी करता है। मुग़ल ***फ़रमान*** 1580 के दशक में फ़तेहपुर सीकरी के निकट एक झील में, हीरविजय (जैन) की प्रेरणा से, मछली पकड़ने पर रोक की पुष्टि करता हैं।

यहाँ अधिक महत्वपूर्ण तथ्य उन विभिन्न इतिहास-सम्बंधी पद्धतियों को समझने का है, जिन्हें भारतीय साहित्यविदों द्वारा उस काल की राजनीतिक घटनाओं को व्यक्त करने के लिए प्रयुक्त किया गया था। बंगाल में, मुरारी गुप्ता ने श्री चैतन्य की काव्यात्मक जीवनी *श्री चैतन्य चरितामृत* की संस्कृत में रचना की, जो श्री चैतन्य के प्रभाव में वैष्णव आंदोलन के विकास को समझने के लिए मूल्यवान ग्रंथ है।

बोध प्रश्न-1

1) ब्राह्मणों तथा जैनों द्वारा रचित संस्कृत ऐतिहासिक ग्रंथों की लेखन शैली के बीच अंतर कीजिए।

....

....

....

2) शांतिचंद्र के ऐतिहासिक लेखनों में अकबर के प्रतिचित्रण का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

3) ऐतिहासिक प्रबंध-ग्रंथ के रूप में *जगद्गुरुकाव्य* का क्या महत्व है?

....

....

....

2.2.2 ब्रजभाषा साहित्य

रीति (***काव्य***) के कवि, राजाओं हेतु रचित ***प्रशस्ति*** (प्रशंसात्मक काव्य) रचनाओं के लिए जाने जाते हैं। केशवदास की *रत्नबावनी* (राजकुमार रत्नसेन की स्तुति में रचित 52 श्लोक; संभवतः लगभग 1570-1580 के दशकों के बीच मधुकरशाह के आदेश पर रचित) – जिसकी पृष्ठभूमि ओरछा पर मुग़ल आधिपत्य पर केंद्रित है – यह मुगल आधिपत्य पर ओरछा के स्थानीय नागरिकों के दृष्टिकोण को प्रदर्शित करती है कि किस प्रकार ओरछा मुग़लों के नियंत्रण में आया था, उनकी क्या प्रतिक्रियाएँ तथा भावनाएँ थीं। यह ग्रंथ इस रचना के नायक बुंदेला शासक रत्नसेन, मधुकरशाह के पुत्र, की रणक्षेत्र में अकबर की सेनाओं के विरुद्ध वीरता की गाथा बखान करता है। केशवदास मुग़ल शक्ति के सम्मुख रत्नसेन की पराजय तथा अंततः समर्पण, और रण से भाग जाने या लड़ते हुए मारे जाने के संबंध में रत्नसेन के असमंजस का वर्णन भी करता है। अंत में रत्नसेन लड़ते हुए मारा जाता है। उसके बलिदान, वीरतापूर्ण चुनौती के लिए अकबर भी उसकी प्रशंसा करता है। ओरछा के समर्पण तथा मुग़ल अधिग्रहण के संबंध में हम फ़ारसी स्रोतों में केवल मुग़ल नज़रिए की ही झलक पाते हैं; यहाँ केशव मुग़ल परिप्रेक्ष्य से भिन्न कहानी पेश करता है; अन्यत्र कहीं भी रत्नसेन की वीरता और ओरछा राज्य द्वारा पेश किए गए प्रतिरोध को उजागर नहीं किया गया है। इस परिप्रेक्ष्य में एक ऐतिहासिक स्रोत के रूप में *रत्नबावनी* का महत्व बहुत अधिक है। लेकिन, हमें तथ्यों की अभिपुष्टि को लेकर सावधान रहना चाहिए। केशवदास मुग़लों की ओर से रत्नसेन द्वारा बंगाल अभियानों में भाग लेने का उल्लेख नहीं करता है। इस प्रकार, स्थानीय

वृत्तांत 'स्थानीय ढंग से ऐतिहासिक होने तथा पूर्व-आधुनिक भारत में राजनीतिक होने के तरीक़ों' पर प्रकाश डालते हैं (बुश 2009: 27)।

केशवदास की *कविप्रिया* भी केशव के संरक्षक राजा इंद्रजीत, ओरछा राज्य की स्थापना, बुंदेलों की वंशावली, दरबारी संस्कृति तथा दरबार के घटनाक्रमों तथा छः दरबारी *पातुरों* (तवायफ़ों) – नवरंग राय, नयनबिचित्र, तंतरंग, रंग राय, रंगमूर्ति और परवीन राय – के संबंध में रोचक चर्चा, आदि पर विशिष्ट रोशनी डालती है। केशवदास का *वीरसिंहदेवचरित*, बीरसिंह देव बुंदेला के दरबार में इतिवृत्तात्मक काव्य की विधा में रचित एक अन्य महत्वपूर्ण ग्रंथ है। यह बीरसिंह देव (1605-1627) के कृत्यों और उपलब्धियों पर केंद्रित हैं।

जहाँगीरजसचंद्रिका (जहाँगीर के यश की चाँदनी, 1612), जिसे सम्भवतः रहीम के पुत्र इराज शाहनवाज़ ख़ान के संरक्षण में रचा गया था, *प्रशस्ति* काव्य के रूप में लिखा गया है, इसमें केशवदास ने जहाँगीर की तुलना राम के रघु-कुल राजाओं सागर तथा दिलीप से की है – भारतीय पृष्ठभूमि में मुस्लिम शासकों को स्वाभाविकता प्रदान करने का प्रयास – एक ऐसी प्रवृत्ति जो तुर्क काल के संस्कृत अभिलेखों में आमतौर पर देखने को मिलती है (1276 के पालम बावली अभिलेख में बलबन का उल्लेख श्री हम्मीर गयासुदीन नृपति सम्राट के रूप में किया गया है)।

अकबर के *उमरा* में, अब्दुल रहीम ख़ान-ए ख़ानान कला तथा साहित्य के महान् संरक्षक के रूप में उभरे, उन्होंने अपने दरबार में मध्य एशिया तथा ईरान के साथ-साथ हिंदुस्तान के विभिन्न अंचलों से भी विद्वानों तथा साहित्यविदों को अपने दरबार में आकर्षित किया। ख़ान-ए ख़ानान फ़ारसी तथा 'हिंदी' विद्वता – 'सार्वदेशिक' तथा स्थानीय परम्परा के एक विरले मिश्रण थे। हम हमदान के निवासी अब्दुल बाक़ी नहावंदी द्वारा 1616 में रचित उनके जीवनीपरक विवरण *मआसिर-ए रहीमी* की चर्चा विस्तार से कर चुके हैं। नहावंदी कई हिंदवी कवियों द्वारा *सबक़-ए हिंदी* में ख़ान-ए ख़ानान पर रचित कई *प्रशस्ति*-रचनाओं का संदर्भ देता है और एक पृथक खंड में उन सभी पर विचार करने की इच्छा व्यक्त करता है, जो वह अंततः कर नहीं सका। इस प्रकार ख़ान-ए ख़ानान के दरबार में *हिंदवी* साहित्यविदों द्वारा सृजित रचनाओं की प्रकृति के विषय में लगभग मौन ही नज़र आता है। केशवदास, जिसने अंततः ओरछा के दरबार का संरक्षणत्व हासिल किया, ने ख़ान-ए ख़ानान के पुत्र इराज ख़ान के आदेश पर *जहाँगीरजसचंद्रिका* की रचना की, इसमें इराज ख़ान, ख़ान-ए ख़ानान तथा उनके पिता बैरम ख़ान की प्रशंसा में रचित छंद संकलित हैं।

गंग (अंतिम सोलहवीं तथा प्रारम्भिक सत्रहवीं शताब्दी) के लगभग 75 ***मुक्तक*** छन्द मुग़ल बादशाहों तथा मुग़ल *उमरा* की प्रशंसा से भरे हुए हैं – अकबर, ख़ान-ए ख़ानान, इत्यादि। गंग एकनौर के क़स्बे में ज़ैन ख़ान द्वारा ब्राह्मणों की जघन्य हत्या के कृत्य की जहाँगीर द्वारा अनदेखी करने के व्यवहार की आलोचना करता है।

क्षेत्रीय-भाषा के साहित्यिक ग्रंथों में ब्रजीकृत फ़ारसी का प्रयोग मुग़ल प्रभाव की ओर संकेत करता है। बुश ने ब्रज के इस 'विशिष्ट भाषाई लचीलेपन' की प्रशंसा की है और इस मिश्रण को उन्होंने फ़ारसी का 'ब्रजीकरण' कहा है, जिसमें अरबी, संस्कृत तथा स्थानीय शब्द 'चमत्कारपूर्ण वक्रता' पैदा करते हैं। ग्रंथकारों का सरोकार भाषा की शुद्धता से अधिक नहीं था, बल्कि वे स्थानीय दरबारों तथा कई बार सेनानायकों/कमानदारों के संरक्षकत्व में भी सेवा करने को तत्पर थे।

2.2.3 राजस्थानी साहित्य

राजस्थान का चारण साहित्य, 'अन्य' ('other') के नज़रिए से अकबर के व्यक्तित्व को समझने तथा उसका राजनीतिक निहितार्थ जानने के लिए क्षेत्रीय-भाषा का एक अत्यंत ही समृद्ध स्रोत है। इस काल के इतिहास के निर्माण के लिए, राजस्थान की विभिन्न बोलियों में उपलब्ध ***रासो, काव्य, वंशावली, ख्यात*** तथा ***वात*** साहित्य महत्वपूर्ण ऐतिहासिक साहित्यिक स्रोत हैं। चारण साहित्य में अक्सर ही अकबर को *श्रीजी, साह, नाथ, असपति* तथा *छत्रपति* के रूप में सम्बोधित किया गया है।

जीवनियों में, 1579-1612 के दौरान लिखा गया, इस तरह का सर्वाधिक प्रारम्भिक ग्रंथ *दलपत विलास* है। इस ग्रंथ के केंद्र में बीकानेर के राजा राय सिंह (1571-1611) का पुत्र कुंवर दलपत सिंह है। यह ग्रंथ मुग़ल-राजपूत सम्बन्धों के प्रारंभिक आधारभूत वर्षों को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह

ग्रंथ इसलिए भी विशेष महत्व रखता है कि लेखक स्वयं ही अधिकांश घटनाओं/प्रसंगों का साक्षी रहा है। यह अकबर के व्यक्तित्व को उदार, करुण-हृदय के रूप में दर्शाता है, साथ ही उसे पानीपत के युद्ध में एक साहसी वीर बादशाह के रूप में भी। यह विस्तार से मारवाड़ के राठौरों की वंशावली प्रस्तुत करता है, साथ ही सूर शासकों के साथ, विशेषकर शेरशाह के साथ, उनके संबन्धों पर भी चर्चा करता है, यद्यपि इसका अधिकांश हिस्सा अकबर के काल के घटनाक्रम का वर्णन करता है। इससे जानकारी मिलती है कि कल्याणमल (1539-1571) ने शेरशाह से बयाना, हिसार, मेवात और रेवाड़ी प्राप्त किया था। यह शेरशाह द्वारा कालिंजर का घेरा डालने और इस दौरान उसकी अंततः मृत्यु की गोद में समा जाने का उल्लेख भी करता है। यह शेरशाह तथा इस्लाम शाह की मृत्यु के बाद उत्तराधिकार को लेकर होने वाले संघर्षों के संबंध में भी सूचना देता है तथा पानीपत के युद्ध (1556) के विवरणों के साथ ही सूर राजव्यवस्था में हेमू की भूमिका पर प्रकाश डालता है। यह रचना कल्याणमल-बैरम ख़ान के सम्बन्धों पर महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराती है। वह कल्याणमल ही था जिसने बैरम ख़ान के अकबर की अनुकंपा से वंचित हो जाने के बाद उसका स्वागत किया था। यह 1570 में अकबर की नागौर यात्रा तथा बीकानेर की राजकुमारियों, राजा कल्याणमल की भतीजियों (भानुमति, भीमराज की पुत्री तथा राज कुंवर, कान्हाजी की पुत्री) के साथ अकबर के विवाह पर राजपूत नज़रिए को सामने लाता है। यह कल्याणमल को जोधपुर प्रदान करने का उल्लेख भी करता है जिसकी राय सिंह ने मेड़ता के साथ अदला-बदली की थी। इससे यह पता चलता है कि अकबर ने जोधपुर उससे वापस नहीं लिया था, बल्कि यह अदला-बदली रायमल की स्वयं की इच्छा थी जिसे अकबर ने सहमति प्रदान की थी। यह मारवाड़ राजघराने के भीतर संघर्षों तथा महत्वाकांक्षाओं को भी रेखांकित करता है, विशेष रूप से राय सिंह तथा उसके भाई अमरा के बीच के तनाव को।

अन्य महत्वपूर्ण समकालीन चारण वृत्तांत चारण कवि दुरसा आढ़ा का विवरण है। ऐसा माना जाता है कि वह अकबर का दरबारी कवि था। उसने राणा प्रताप, उसकी वीरता, अकबर के विरुद्ध उसके प्रतिरोध की प्रशंसा में तथा इसके साथ ही राणा के प्रति अकबर के अव्यक्त सम्मान के विषय में 75 छंदों की रचना की है। लेकिन, इनको ऐतिहासिक ग्रंथ के रूप में इस्तेमाल करने के संबंध में सावधान रहने की आवश्यकता है क्योंकि ये बाद में किए गए प्रक्षेपों से भरा हुआ है। लेकिन, यह इस महत्वपूर्ण जानकारी को उपलब्ध कराता है कि राणा का छोटा भाई सयात सिंह राणा के ख़िलाफ़ निर्णायक युद्ध में मुग़लों की ओर से लड़ा था। दुरसा यह भी दर्ज़ करता है कि राणा उदय सिंह के छोटे भाई ने अकबर का पक्ष लिया तथा वह मुग़लों की ओर से सिरोही के राव सुरतान सिंह के विरुद्ध लड़ा था और मुग़लों के पक्ष में लड़ते हुए उसने अपनी जान की बाज़ी लगा दी थी। दुरसा आढ़ा द्वारा अकबर को अक्सर ही हिंदू देव-कुल के अवतारों राम, कृष्ण तथा लक्ष्मण के रूप में पेश किया गया है (*गीत अकबर बादशाह रो, दुरसा आढ़ा ग्रंथावली* में)। दुरसा आढ़ा ने अकबर की उपलब्धियों को इतना बढ़ा-चढ़ा कर बखान किया है कि, 'उसके शब्दों में उसकी सफलता के कारण इंद्र का आसन भी डोलने लगा था'।

अमृतराय का *मानचरित* (1585) और नरोत्तम का *मानचरित रासो* (1594), राजस्थान में ब्रज में रचित मानसिंह की जीवनियाँ हैं जो अकबर के काल में मानसिंह की गतिविधियों पर प्रकाश डालती हैं। ये उस काल की राजपूत राजनीतिक संस्कृति को रेखांकित करती हैं। ऐतिहासिक महत्व का एक अन्य ग्रंथ सुजान सिंह हाड़ा (1554-1585) की जीवनी *सुजानचरित* (1590), हाड़ाओं के दरबारी कवि चंद्रशेखर द्वारा रचित, संस्कृत काव्य है।

2.2.4 असम *बुरुंजी*

बुरुंजियाँ (शाब्दिक अर्थः गाथाओं का ऐसा संग्रह जो अज्ञानी को सिखाता है) एक अन्य महत्वपूर्ण स्रोत हैं जो पूर्व-औपनिवेशिक असम के इतिहास को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। *बुरुंजी* सोलहवीं शताब्दी से नज़र आने लगी थीं तथा मुख्यतः ये गद्य में लिखी गई हैं। शुरुआती *बुरुंजियाँ* अहोम बोली में लिखी गईं थीं, जबकि कालांतर में वे असमी में लिखी गईं। सबसे शुरुआती *अहोम बुरुंजी* सोलहवीं शताब्दी के आखिर में लिखी गई थी। यह तेरहवीं शताब्दी में अहोम राजा सुकफा के आक्रमण के समय से शुरू होती है। यह समकालीन घटनाओं, शासकों (अहोम, जैंतिया, कचारी तथा त्रिपुरी) के बीच संवाद-वार्ताओं, करों की प्रकृति, प्रतिवेदनों, इत्यादि पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालती है। *असम बुरुंजी*, अहोम राज्य की स्थापना से 1826 में असम के ब्रिटिश अधिग्रहण तक की घटनाओं का विवरण प्रस्तुत करती है। *देउढाइ असम बुरुंजी* मोटे तौर पर अहोम शासन की स्थापना (568 सी ई) से ही अहोम

इतिहास की विवेचना करती है। यह इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि यह अहोम समाज के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालती है – अहोम शाही विवाह समारोह, मनोरंजन, अहोम शवाधान पद्धतियाँ, इत्यादि। यह कोच, जैंतिया, चुटिया तथा नारा राजाओं के मूल का भी विवरण प्रस्तुत करती है। मुग़ल-असम सम्बन्धों को समझने के लिए एक अन्य महत्वपूर्ण *बुरुंजी, पादशाह बुरुंजी* है। यह असमी में है किंतु अन्य *बुरुंजियों* के विपरीत यह अरबी तथा फ़ारसी शब्दों से भरी हुई है। यह बाबर, हुमायूँ, शेरशाह तथा अकबर के संबंध में महत्वपूर्ण पक्ष सामने लाती है। इसमें मानसिंह के सेवा-कार्यकाल का चित्रण भी किया गया है तथा कूच-बिहार के शासकों के साथ मुग़लों के संघर्ष के विषय में जानकारी भी है। *कचारी बुरुंजी* अहोम-कचारी सम्बन्धों पर प्रकाश डालती है। इसी प्रकार *जैंतिया बुरुंजी*, जैंतिया राज्य पर रोशनी डालती है। *चुटिया बुरुंजी*, 1189 सी ई से लेकर सोलहवीं शताब्दी में चुटियाओं के विखंडित हो जाने तक के इतिहास की चर्चा करती है।

बोध प्रश्न-2

1) ऐतिहासिक स्रोत के रूप में केशवदास की *रत्नबावनी* की चर्चा कीजिए।

....

....

....

2) *दलपत विलास* शेरशाह तथा अकबर के काल की राजव्यवस्था पर क्या प्रकाश डालता है?

....

....

....

3) मुग़ल-राजपूत सम्बन्धों को समझने में राजस्थानी स्रोतों के महत्व की चर्चा कीजिए।

....

....

....

4) एक महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में असम के इतिहास के निर्माण में असम *बुरुंजियों* के महत्व पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

2.3 यूरोपीय यात्रियों की मुग़ल भारत की समझ

इस भाग में, हम मुख्यतः जेसुइटों के विवरणों तथा उन यूरोपीय यात्रियों के विवरणों पर ध्यान केंद्रित करेंगे जो अकबर के दरबार में आए थे। जेसुइट अभियानों के प्राथमिक उद्देश्य राजनीतिक-धार्मिक दोनों प्रकार के थे तथा उनके अभियान मुख्यतः धर्म-प्रचार पर केंद्रित थे, जबकि यूरोपीय यात्री अपने वाणिज्यिक लाभों की पूर्ति के लिए राजनीतिक अनुकम्पा प्राप्त करने के इरादे से प्रेरित थे।

2.3.1 जेसुइटों के वृत्तांत

अकबर के दरबार में शुरुआती जेसुइट अभियान

जेसुइट-मुग़लों का प्रथम साक्षात्कार अकबर के काल में हुआ। फ़ादर ड्यू जैरिक (1566-1617) ने *हिस्ट्रॉयर* (*Histoire*) में भारत का भव्य विवरण छोड़ा है। इसे 'मोगल (मुगल) साम्राज्य का सर्वाधिक प्रारंभिक यूरोपीय वर्णन' कहा जा सकता है। ड्यू जैरिक स्वयं कभी भारत नहीं आया था तथा उसकी *हिस्ट्रॉयर* वास्तव में जेसुइट विवरणों का एक संग्रह है। लेकिन जैरिक का विवरण इसलिए विशेष महत्व रखता है कि उसने 1610 से पहले के जेसुइट पादरियों के पत्रों के संक्षेपणों, उद्धरणों तथा सारांशों को विश्वसनीय ढंग से दर्ज़ किया है जो अन्यथा हमारी पहुँच से बाहर ही रहते। *हिस्ट्रॉयर*

तीन खंडों में रचित वृत्तांत है जिसमें से प्रत्येक के दो भाग हैं। हमारे लिए यहाँ मुख्यतः प्रथम खंड विचारणीय है जो 1599 तक के हिंदुस्तान से संबंध रखता है, अन्य दो खंड अफ्रीका तथा जापान से संबंध रखते हैं। 1600 से पहले के विवरणों के लिए जैरिक के प्राथमिक स्रोत गुज़्मन की *हिस्टॉरिया*, फादर लेयर्टियस के लेख (notes), लुसेना की सेंट फ्रांसिस ज़ेवियर की जीवनी, और गरैरो द्वारा उसे उपलब्ध कराई गई सामग्री, ख़ास तौर पर मिशनरियों के पत्र तथा रिपोर्ट, थे। 'जैरिक ने अपने स्रोतों को निष्ठा के साथ प्रयुक्त किया है, या तो उनका शब्दशः अनुवाद कर या सावधानी के साथ उनका सार-संक्षेप कर' (पेन 1926: xxxviii)।

जैरिक का वृत्तांत अत्यधिक ऐतिहासिक महत्व का है क्योंकि यह निजी प्रेक्षणों तथा अनुभवों पर आधारित है। इसके अतिरिक्त, जेसुइट वृत्तांतों को 'यूरोपीय लेखकों की सबसे शुरुआती धारणाओं' के रूप में देखा जा सकता है। जैरिक ने अकबर के दरबार में भेजे गए तीन जेसुइट मिशनों के विवरणों को पुनर्रचित किया है। अकबर के दरबार में पहला जेसुइट मिशन अकबर के अनुरोध पर पादरी रूडोल्फ़ एक्वाविवा के नेतृत्व में भेजा गया था जिसमें फादर एंटोनियो मॉन्सरेट तथा फादर फ्रंक्वा हेनरीक भी शामिल थे। यह मिशन फ़तेहपुर में अकबर के दरबार में 1580 में पहुँचा। यद्यपि इस भेजे गए मिशन से पहले से ही 1578 में पुर्तगाली फादर पियरे टौरो अकबर के दरबार में मौजूद थे। दूसरा मिशन फादर एड्वर्ड लायटन के नेतृत्व में भेजा गया, जिसमें क्रिस्टोफ़र डि वेगा भी शामिल थे, जो 1591 में लाहौर में अकबर के दरबार में प्रस्तुत हुए; जबकि तीसरा मिशन 1595 में फादर हिरोस्मे ज़ेवियर नौरॉइस के नेतृत्व में, फादर इमैनुअल पिजनेरो तथा ब्रदर बेनुआ गोज़/डि गोज़ के साथ लाहौर पहुंचा।

जेसुइट अक्सर अकबर के अभियानों में उसके साथ गए तथा उन्होंने अकबर के पुत्रों के शिक्षक के रूप में कार्य किया। उन्हें दरबार के आयोजनों के दौरान अकबर के निकट स्थान प्रदान किया गया था। जेसुइट वृत्तांत इसलिए महत्वपूर्ण हैं कि ये उनके निजी अनुभवों पर आधारित हैं। ये मुग़ल शहज़ादों, *उमरा* तथा हिंदुस्तान के लोगों के जीवन की सामान्य परिस्थितियों पर विशिष्ट टिप्पणियाँ हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं। अकबर के प्रशासनिक तंत्र पर उनकी अंतर्दृष्टि अत्यंत महत्वपूर्ण है। *वज़ीर*, अमीरों, *कोतवाल*, *क़ाज़ी* तथा ख्वाजासराओं (eunuchs) के संबंध में उनके वर्णन भी महत्वपूर्ण हैं। विधि तथा दंड पर उनके वर्णन काफी उपयोगी हैं। खम्भात तथा लाहौर के बीच के क्षेत्र में पानी को निकालने और सिंचाई हेतु प्रयोग में लाई जाने वाली युक्ति *चरस* के प्रचलन का वर्णन भी अंतर्दृष्टि प्रदान करने वाला है। जेसुइटों के विवरण दरबारी तहज़ीब तथा दरबार के कार्य-संचालन को समझने के लिए भी महत्वपूर्ण हैं। जेसुइटों के विवरणों में यूरोपीय चित्रकला में शहज़ादे के रूप में जहाँगीर की रुचि के संबंध में भी दिलचस्प तथ्य उपलब्ध हैं, जिसने अपनी चित्रशाला में कई यूरोपीय चित्रों को चित्रित करवाया था। अकबर के दक्खन अभियानों तथा मलिक अम्बर के साथ उसके टकरावों के वर्णन भी जेसुइट पादरियों ने उपलब्ध कराए हैं, जो इन अभियानों के प्रत्यक्षदर्शी थे। लाहौर से कश्मीर की यात्रा में अकबर के साथ यात्रा करते हुए जेसुइट पादरियों ने कश्मीर राज्य का जीवंत वर्णन प्रस्तुत किया है। जेसुइट अकबर के जिज्ञासु मस्तिष्क की भी चर्चा करते हैं, ख़ास तौर पर उसके *गुँग* प्रयोग की। आगरा तथा अकबर के साम्राज्य के अन्य हिस्सों में, ख़ासकर लाहौर व खम्भात में मिशनरी गतिविधियाँ तथा ईसाई बसावटें, अकबर तथा जहाँगीर के ईसाइयों और मिशनरियों के प्रति उदार रवैये को प्रकट करती हैं। जेसुइट वृत्तांत, जेसुइटों तथा अंग्रेज़ साहसिक व्यापारी जॉन मिल्डेनहॉल, जो 1603 में अकबर के दरबार में आया था, के बीच प्रतिद्वंद्विता पर भी प्रकाश डालते हैं। उन्होंने स्वयं तथा स्वयं के देशवासियों के लिए छूटें हासिल करने के लिए कोई भी कसर नहीं उठा रखी थी। जेसुइट वृत्तांत जहाँगीर के विद्रोह, अकबर की बीमारी तथा उन हालात का भी ज़िक्र करते हैं जिनका परिणाम अंततः जहाँगीर की गद्दीनशीनी में निकला। इस प्रकार, जेसुइट वृत्तांत 'अन्य' ('others') के नज़रिए से अकबर के काल को समझने में अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। लेकिन, प्रायः अकबर की धार्मिक विश्वदृष्टि पर उनकी टिप्पणियाँ पक्षपातपूर्ण हैं। तथापि, राजनीतिक घटनाओं, विद्वतजनों, आम प्रजाजनों तथा *उमरा* वर्ग का उनका अवलोकन बहुत महत्व रखता है। पेन का यह दृष्टिकोण उपयुक्त प्रतीत होता है कि जेसुइट मिशनों को आमंत्रित करने में अकबर का इरादा राजनीतिक लाभ पाने का था, पुर्तगाली बसावटों पर नज़र रखने हेतु। अकबर हमेशा से ही मुग़ल सरहदों पर पुर्तगाली बसावटों के प्रति सचेत तथा सतर्क था, विशेषकर पश्चिमी तट पर पुर्तगाली प्रभाव उसके लिए चिंता का विषय था, जिसने पश्चिमी तट के बन्दरगाहों तक मुग़ल पहुँच को अवरूद्ध कर दिया था। पेन (ड्यू जैरिक, 1926: xlvi) ने पुर्तगालियों को उचित ही 'अकबर के पार्श्व में एक परेशान

करने वाला काँटा' कहा है। हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जेसुइट अपने ईसाई पाठकों को ध्यान में रखकर लिख रहे थे, जहाँ पृष्ठभूमि में ईसाई 'धर्म की सर्वोच्चता' का विचार प्रभावी था और जिसका जेसुइट विवरण भली-भाँति प्रतिनिधित्व करते हैं।

फादर मॉन्सरेट

फादर एंटोनियो डे मॉन्सरेट एक जेसुइट मिशनरी थे जो अकबर के दरबार में आने वाले पहले जेसुइट मिशन में फादर रूडोल्फ़ एक्वाविवा (मिशन के मुखिया) और अपने फ़ारसी दुभाषिया फ्रंक्वा हेनरीक के साथ आए थे। पहला जेसुइट मिशन अकबर के दरबार में 1580 में पहुँचा।

फादर मॉन्सरेट का विवरण उनकी गोआ से फ़तेहपुर सीकरी की यात्रा तथा तदंतर मुग़ल दरबार में उनके निवास का प्रत्यक्षदर्शी बखान है। वह भारत के शहरों का जीवंत वर्णन उपलब्ध कराते हैं। वह सूरत, इसके क़िले, सैन्य छावनियों, व्यापारिक गतिविधियों तथा इस बंदरगाह शहर के जहाज़ों की प्रशंसा करते हैं। मॉन्सरेट ने मांडू तथा ग्वालियर की क़िलेबंदी की भी भरपूर प्रशंसा की है। फादर मॉन्सरेट वर्णन करते हैं कि जब वह अकबर तथा उसके पुत्रों से मिले तो उसके दो पुत्र पुर्तगाली वेशभूषा में सुसज्जित थे, जो अन्य संस्कृतियों के प्रति अकबर की स्वीकार्यता तथा उनके प्रति सम्मान की ओर संकेत करता है। मॉन्सरेट फ़तेहपुर सीकरी की जलापूर्ति व्यवस्था का वर्णन करते हैं, जहाँ शहर तथा महल की जल की आवश्यकता पूर्ण करने के लिए एक तालाब/बांध निर्माण का आदेश दिया गया था। मॉन्सरेट आगरा के दक्ष शिल्पकारों की भी भरपूर प्रशंसा करता है। *इबादत ख़ाना* की बहस का उसका विवरण अपने आप में विशिष्ट और परिपूर्ण है। मॉन्सरेट हमें जानकारी देता है कि अकबर ने जेसुइट फादरों से उसके पुत्र मुराद के शिक्षक बनने का आग्रह किया था। मॉन्सरेट का बंगाल तथा बिहार के क्षेत्रों में 1580-1581 के विद्रोहों का विवरण भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह 'अन्य' के नज़रिए को सामने रखता है। मॉन्सेरट *सती* प्रथा से ईसाइयों का साबका होने तथा इसके प्रति उनकी प्रतिक्रिया का वर्णन भी करता है। मॉन्सरेट का विवरण अकबर के विशिष्ट व्यक्तित्व, शिकार में उसकी रुचि, आम जनता में घुल-मिल जाने के प्रति उसके प्रेम, उसकी उदारता, विदेशियों के प्रति उसका शिष्ट व्यवहार तथा विनम्रता, उदार शिक्षा के प्रसार पर उसका बल तथा न्यायिक व्यवस्था, डाक-व्यवस्था और दंड, इत्यादि के विषय में जानने के लिए भी मूल्यवान है। मॉन्सरेट शाही राजदरबार के प्रशासनिक ढाँचे तथा दरबारी रिवाजों की बारीक़ियों के संबंध में भी हमारे ज्ञान में इज़ाफ़ा करता है। अकबर की नई राजधानी सीकरी की निर्माण-प्रक्रिया का उसके द्वारा दिया गया ब्यौरा अकबर की राजधानी निर्माण की परियोजना में दिलचस्पी की ओर संकेत करता है। फादर मॉन्सरेट शहज़ादों की शिक्षा का समुचित प्रबंध करने के लिए भी अकबर की प्रशंसा करता है। मुग़ल मुद्रा-प्रणाली के संचालन तथा मुद्रा-प्रणाली के संचालन में स्थिरता हेतु मुग़ल शासकों द्वारा प्रयुक्त नियंत्रण को समझने के लिए उसके द्वारा मुग़ल टकसालों का दिया गया विवरण बहुत ही महत्वपूर्ण है। इस प्रकार, फादर मॉन्सरेट का विवरण यह संकेत देता है कि न केवल वह एक जेसुइट मिशनरी था, बल्कि एक उत्साही विश्व-विवरण-लेखक भी था। लेकिन, मॉन्सरेट द्वारा विवेचित तथा विश्लेषित कुछ मामलों में उन्हें जस का तस स्वीकारने के प्रति सावधान रहने की आवश्यकता है, विशेषकर धार्मिक विषयों, *इबादत ख़ाना* की बैठकों पर उसकी विवेचना तथा सबसे अधिक राज्य द्वारा कुलीनों की सम्पत्ति जब्त करने की व्यवस्था (escheat) की उसकी समझ को।

2.3.2 अंग्रेज़ यात्री

पुर्तगाली और जेसुइटों के विपरीत, मुग़लों के साथ ब्रिटिशों का साक्षात्कार सोलहवीं शताब्दी के बिल्कुल आखिर में जाकर ही हुआ। सोलहवीं शताब्दी के अंत तथा प्रारम्भिक सत्रहवीं शताब्दी में दो अंग्रेज़ साहसिक व्यापारी मुग़ल साम्राज्य की यात्रा पर आएः राल्फ फ़िच (1583-1591) तथा जॉन मिल्डेनहॉल (1599-1606)। मिल्डेनहॉल का जो विवरण उपलब्ध है वह अत्यंत संक्षिप्त है तथा अधिकतर आगरा व मुग़ल दरबार में मिल्डेनहॉल के जेसुइटों के साथ टकराव की ही चर्चा करता है। इसके विपरीत, राल्फ फ़िच मुग़ल परिवेश का अधिक विस्तृत पर्यवेक्षण उपलब्ध कराता है। अतः यहाँ हम फ़िच के विवरण के महत्व की विवेचना करेंगे।

1600 सी ई के चार्टर जारी होने से पहले, फ़रवरी 1583 में न्यूबरी तथा उनके साथी (जॉन एल्डर, राल्फ फ़िच, और रत्नों के पारखी विलियम लीड्ज़) लंदन से एक जहाज़, 'टाइगर' पर सवार होकर

भारत के लिए निकले। 1585 में वे गोआ पहुँचे तथा वहाँ से उज्जैन होकर आगरा पहुँचे, जिसके बाद वे उसी साल फ़तेहपुर सीकरी गए। फ़तेहपुर में लीड्ज़ अकबर की सेवा में दाखिल हुआ, न्यूबरी ने थल मार्ग से घर वापस लौटने का निर्णय किया, तो वहीं राल्फ फ़िच पूर्वी भारत (बंगाल) की विस्तृत जानकारी हेतु आगरा से इलाहाबाद, बनारस तथा पटना होते हुए नदी मार्ग से टांडा (बंगाल) जाने के लिए जहाज़ पर सवार हो गया। टांडा से आगे वह कूच बिहार गया और वहाँ से गंगा नदी मार्ग द्वारा यात्रा करते हुए वह हुगली में पुर्तगाली बस्तियों तक गया और वहाँ से चटगाँव होते हुए 1586 में वह पेगू व दक्षिण-पूर्व एशिया के लिए निकल गया। वह 1588 में पेगू से बंगाल लौटा। इस बार घर लौटते हुए उसने तटीय मार्ग से कोचीन जाने का निर्णय किया, वहाँ से गोआ से चौल होते हुए तथा उसके बाद बसरा, अलेप्पो होते हुए अंततः वह अप्रैल 1591 में लंदन पहुँच गया।

राल्फ फ़िच द्वारा मध्यकालीन भारतीय शहरों का किया गया पर्यवेक्षण विशिष्ट है। आगरा तथा फ़तेहपुर सीकरी के विस्तार के बारे में बयान करते हुए वह इनकी तुलना लंदन से करता है। वह आगरा तथा सीकरी के मध्य के रास्ते में लंबे बारह किलोमीटर क्षेत्र में फैले बाज़ार का उल्लेख करता है। वह दक्ष शिल्पकारों द्वारा तैयार सभी प्रकार के शिल्प-उत्पादों तथा वाणिज्यिक-वस्तुओं से भरे-पूरे बाज़ारों की जीवंत चर्चा करता है। फ़िच आगरा तथा टांडा (बंगाल) के मध्य नदी मार्ग से होने वाली व्यस्त व्यापारिक गतिविधियों की मौजूदगी का भी हवाला देता है। मध्यकालीन समाज के संबंध में फ़िच के अवलोकन भी महत्वपूर्ण हैं। विशिष्ट बात है कि वह ब्राह्मणों के बीच बहुविवाह के प्रचलन का उल्लेख करता है। इसी प्रकार, वह भारतीय समाज में बाल विवाह के प्रचलन के बारे में बात करता है। वह बनारस शहर के सूती वस्त्र और पगड़ी के कपड़े (shashes) की उत्कृष्टता का भी उल्लेख करता है। वह समान रूप से पटना से बंगाल के क्षेत्रों में सूत, शक्कर, तथा अफ़ीम के व्यापार की व्यस्त गतिविधियों की मौजूदगी की प्रशंसा करता है। वह पटना से बंगाल जाने वाले मार्ग में समृद्ध वन्य-जीवन की मौजूदगी, विशेष रूप से बाघ की, का भी वर्णन करता है। वह कूच बिहार क्षेत्र के रेशम, कस्तूरी तथा सूत की भी तारीफ़ करता है। फ़िच मध्यकालीन व्यापार मार्गों, नदीय, तटीय तथा अंतरस्थलीय मार्गों, और तटीय व नदीय मार्गों पर स्थित शहरों और क़स्बों की उपस्थिति, व्यापार की वस्तुओं, तथा मार्ग में पड़ने वाले क़स्बों की विशिष्टता के बारे में भी वर्णन करता है। वह सोनारगाँव के बाज़ारों में महीन सूती वस्त्र की उपलब्धता की जी भरके तारीफ़ करता है। वह नागपटन के मोती उत्पादन तथा कालीकट में उत्पादित काली मिर्च व दालचीनी की खेती से भी अभिभूत नज़र आता है। उसका इस क्षेत्र में काली मिर्च के उत्पादन का विवरण काफ़ी विस्तृत है। वह इस क्षेत्र में जायफल और अदरक के उत्पादन का भी वर्णन करता है। उसके द्वारा उल्लेखित भारत में आयातित वस्तुओं में मोटे तौर पर पेगू के बहुमूल्य रत्न, 'तार्तारी' से कस्तूरी का ज़िक्र है। वह विजयनगर के हीरों की प्रशंसा करता है, वह ज़िक्र करता है कि सर्वोत्तम मोती बहरीन के होते हैं। लेकिन वहीं, पेल्सर्ट की तरह ही मकानों और आम जनता के जीवन की परिस्थितियों का उसका ब्यौरा भी *उमरा* वर्ग और आम जन की जीवनशैलियों के बीच गहरी खाई का संकेत करता है। वह जानकारी देता है कि सामान्य जन फूस के बने घरों में रहते थे, जिनमें बहुत ही अल्प फ़र्नीचर होता था। वह केरल क्षेत्र के नायरों का सजीव वर्णन भी उपलब्ध कराता है।

बोध प्रश्न-3

1) जेसुइटों के साथ अकबर के सम्बन्धों को समझने हेतु ड्यू जैरिक के वृत्तांत का एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक रचना के रूप में क्या महत्व है?

....

....

....

2) फ़ादर मॉन्सरेट कौन थे? अकबर के साथ उनके सम्बंधों की चर्चा कीजिए।

....

....

....

3) भारत के संबंध में राल्फ़ फ़िच के अवलोकन का संक्षेप में विश्लेषण कीजिए।

....

....

....

2.4 सारांश

यह इकाई अकबर के काल में भारत के ऐतिहासिक विकासक्रमों को समझने के लिए भारतीय साहित्य के महत्व पर केंद्रित है। इस काल का इतिहास लिखने के लिए इतिहासकारों ने मुख्यतः फ़ारसी वृत्तांतों – प्रशासनिक आदर्शों तथा तारीख़नवीसों के विवरणों – पर भरोसा किया। समकालीन राजव्यवस्था, समाज तथा इस काल की धार्मिक प्रवृत्तियों को विश्लेषित करने के लिए शायद ही भारतीय साहित्यिक स्रोतों पर कोई ध्यान दिया गया है। इस दृष्टि से भारतीय साहित्यिक स्रोत अत्यंत महत्वपूर्ण हैं क्योंकि वे 'अन्य' ('other') के नज़रिए का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह जानना महत्वपूर्ण है कि भारतीय साहित्यिक ग्रंथों ने अकबर, एक मुस्लिम बादशाह, को भारतीय परम्परा में आत्मसात करने का प्रयास किया है तथा उन्होंने अकबर का प्रतिचित्रण एक भारतीय शासक के रूप में किया है तथा उनका उल्लेख विष्णु के अवतार के रूप में किया है। इस प्रकार, भारतीय साहित्यिक 'विन्यास' में एक मुस्लिम राजा पर 'हिंदू' प्रतीकों का प्रत्यारोपण किया गया है। इस संदर्भ में, जैन तथा ब्राह्मण संस्कृत ग्रंथ विशेष महत्व के हैं और हमें अकबर के आक्रमणों को उन शासकों के नज़रिए से समझने में मदद करते हैं जिन्हें अकबर ने अपने अधीन कर लिया था। केशवदास द्वारा ब्रजभाषा में रचित ग्रंथ, मुग़ल-ओरछा टकराव को समझने में विशेष महत्व का है। राजस्थान के *रासो, ख्यात* तथा *वात* साहित्य भी समान रूप से महत्वपूर्ण हैं जो मुग़ल-राजपूत सम्बन्धों को समझने के लिए महत्वपूर्ण हैं। उत्तर-पूर्व (असम) में मुग़लों के साम्राज्य विस्तार को समझने में *बुरुंजी* साहित्य मुग़ल-असम संबंध साथ ही स्थानीय राजनीतिक संरचनाओं पर विस्तार से प्रकाश डालता है।

अकबर के काल में, भारतीय समुद्र-क्षेत्र में यूरोपियों, विशेषकर पुर्तगाली तथा अंग्रेजों, के आगमन के साथ ही साहित्य की एक अन्य विधा सामने आती है। इस प्रकार जेसुइट तथा अंग्रेज़ यात्रियों के यात्रा वृत्तांत, मुग़ल साम्राज्य तथा अकबर के दरबार की राजनीति के विषय में हमारी समझ को इन यूरोपीय वृत्तांतों में दर्ज़ अवलोकनों के आधार पर और समृद्ध करते हैं। इस संदर्भ में फ़ादर मॉन्सरेट तथा राल्फ़ फ़िच के विवरण काफ़ी महत्व के हैं। इनके लेखन के माध्यम से मुग़ल साम्राज्य को लेकर यूरोपीय नज़रिए का पता लग पाता है।

2.5 शब्दावली

चरित	जीवनी
फ़रमान	बादशाह का शाही आदेश
काव्य	कविता
ख्यात	मुख्यतः ऐतिहासिक व्यक्तित्व / शासक पर केंद्रित *प्रशस्ति*-परक चारणिक वृत्तांत
मुक्तक	मुक्त रूप से लिखित छंद; *मुक्तक* सामान्यतः किसी बड़े आख्यान का हिस्सा नहीं होते हैं
प्रबंध	आख्यानात्मक काव्य, इसमें उस काल के प्रमुख व्यक्तित्वों के संबंध में अर्द्ध-ऐतिहासिक कथा-वृत्तांतों को शामिल किया जाता है
प्रशस्ति	प्रशंसा-परक काव्य
रासो	वीरगाथात्मक काव्य

रीति (*काव्य*)	शब्दशः पद्धतिपूर्ण कविता; वह काव्य जिसमें संस्कृत काव्यशास्त्रों की अवधारणाओं को परिभाषित तथा समझाया गया होता है – *रस* (भाव), *नायिकाभेद* (स्त्री चरित्रों के प्रकार), *अलंकार* (काव्य के आलंकारिक तत्व)। कवियों ने संस्कृत काव्य विधान को क्षेत्रीय-भाषा साहित्य में रूपांतरित करने का प्रयास किया है। *रीति* कविता में *श्रृंगारपूर्ण* काव्य पर अत्यंत ध्यान दिया गया है
वंशावली	पीढ़ियों/वंश-क्रम का विवरण
वात	संक्षिप्त मौखिक आख्यान

2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) देखें उप-भाग 2.2.1

2) देखें उप-भाग 2.2.1

3) देखें उप-भाग 2.2.1

बोध प्रश्न-2

1) देखें उप-भाग 2.2.2

2) देखें उप-भाग 2.2.3

3) देखें उप-भाग 2.2.3

4) देखें उप-भाग 2.2.4

बोध प्रश्न-3

1) देखें उप-भाग 2.3.1

2) देखें उप-भाग 2.3.1

3) देखें उप-भाग 2.3.2

2.7 संदर्भ ग्रंथ

भदानी, बी. एल., (1992) 'द प्रोफ़ायल ऑफ़ अकबर इन कंटेम्परेरी राजस्थानी लिटरेचर', *सोशल साइंटिस्ट*, भाग-20, न. 9-10, सितम्बर-अक्तूबर, पृ. 46-53.

ब्रॉयन, टॉमस डे एवं एलिसन बुश, (संपा.) (2014) *कल्चर एंड सर्क्युलेशनः लिटेरेचर इन मोशन इन अर्ली मॉडर्न इंडिया* (लाइडेनः ब्रिल).

बुश, एलिसन, (2014) 'पोयट्री इन मोशनः लिटेरेरी सर्क्युलेशन इन मुग़ल इंडिया', ब्रॉयन, टॉमस डे एवं एलिसन बुश, (संपा.) (2014) *कल्चर एंड सर्क्युलेशनः लिटेरेचर इन मोशन इन अर्ली मॉडर्न इंडिया* (लाइडेनः ब्रिल).

बुश, एलिसन, (2011) *पोयट्री ऑफ़ किंग्सः द क्लासिकल हिंदी लिटेरेचर ऑफ़ मुग़ल इंडिया* (ऑक्सफ़ोर्डः ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

बुश, एलिसन, (2009) *ब्रज बियोंड ब्रजः क्लासिकल हिंदी इन द मुग़ल वर्ल्ड, ओकेज़नल पब्लिकेशन*-12 (नई दिल्लीः इंडिया इंटरनेशनल सेंटर).

ड्यू जैरिक, फ़ादर पियरे, (1926) *अकबर एंड द जेसुइट्स, सी.एच.* पेन के परिचय तथा नोट्स के साथ अनुवादित (लंदनः जॉर्ज राउटलेज एंड संस लि.).

फ़ॉस्टर, विलियम, (संपा.) (1921) *अर्ली ट्रैवल्ज़ इन इंडिया (1583.1619)* (लंदनः हमफ़्रे मिल्फ़ोर्ड).

ख़ान, अहसन रज़ा, (1976) '*दलपत विलास*, नैन्सी एंड बाँकीदासः अ स्टडी इन सम आसपेक्स्टस ऑफ़ बायोग्रैफ़िकल एंड ख्यात लिटेरेचर ऑफ़ राजस्थान', *प्रोसीडिंग्स ऑफ़ इंडियन हिस्ट्री कांग्रेस*, भाग-37, पृ. 279-284.

मॉन्सरेट, एंटोनियो डे, (1922) *द कमेंटरी ऑफ़ फ़ादर मॉन्सरेट, एस. जे. ऑन हिज़ ज़र्नी टू द कोर्ट ऑफ़ अकबर*, अनुवादित, जे. एस. होयलैंड., टिप्पणीकृत एस. एन. बनर्जी (लंदनः ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

शर्मा, गिरिजा शंकर, (2003) '*दलपत विलासः* इतिहास की दृष्टि से समीक्षण,' *हमारे पुरोधा-19* (उदयपुरः राजस्थान साहित्य अकादमी).

ट्रश्के, ऑड्री, (2016) *कल्चर ऑफ़ एनकाउंटरः संस्कृत एट द मुग़ल कोर्ट* (गुड़गाँवः पेंगुइन बुक्स).

2.8 शैक्षणिक वीडियो

Historiography and Sources-3
https://www.youtube.com/watch?v=4y5eAdxPn3A

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY